संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

॥ ऋषि प्रसाद ॥

हिन्दी

वर्षः ९
अंकः ७५
मार्च १९९९

काँटों के बीच तू गुलाब होकर महक।
निन्दकों के बीच तू निर्दोष नारायण में महक॥

ऋषि प्रसाद

वर्ष : ९
अंक : ७५
९ मार्च १९९९

सम्पादक : क. रा. पटेल
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क
भारत, नेपाल व भूटान में
(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 30
(२) पंचवार्षिक : US $ 120
(३) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

इस अंक में

१. तत्त्वदर्शन २
★ संसार का सार क्या है ?
२. साधना-प्रकाश ३
★ आत्मनिरीक्षण के द्वारा परमात्मदर्शन आसान
★ सब शूलों का मूल
३. गीता-अमृत ५
★ कर्म का फल भोगना ही पड़ता है
४. भक्ति-भागीरथी १०
★ मेरा मुझमें कुछ नहीं...
५. जीवन-सौरभ १३
★ प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति
६. योगामृत १५
★ त्राटक साधना : बिन्दु त्राटक-मूर्ति त्राटक-दीपज्योति त्राटक
७. प्रसंग-माधुरी १७
★ अपकार के प्रति भी उपकार
★ काशीनरेश की न्यायप्रियता
८. प्रेरक प्रसंग १९
★ वेश का गौरव
★ अद्वैतनिष्ठा का अनुभव किया
★ लगी ग्वाले की बात... हुआ बेड़ा पार...
९. नारी ! तू नारायणी २१
★ कर्माबाई की खिचड़ी
१०. सर्वदेवमयी गौमाता २३
★ गौमाता : दुःख-दारिद्र्यहारिणी
११. शरीर-स्वास्थ्य २४
★ नेत्र-सुरक्षा : आँखों को सँभालो... चश्मा छोड़ो ० नेत्र-स्नान ० पानी में आँखें खोलो ० विश्राम ० आँखों को गतिशील रखो ० सूर्य की किरणों का सेवन ० आँखों की सामान्य कसरतें ० सही ढंग से पढ़ो और देखो ० उचित आहार-विहार ० नेत्ररक्षा के उपाय ० नेत्रज्योतिवर्धक घरेलू नुस्खे
★ सप्तधातुवर्धक वटी
१२. संस्था-समाचार २८

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग
SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

संसार का सार क्या है ?

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' में भगवान श्रीराम ने वशिष्ठजी से प्रश्न किया है : ''हे भगवन् ! देह, इन्द्रियाँ और जगत-कलना में सार वस्तु क्या है ? यह कृपा करके बताइये।''

देह सार है, इन्द्रियाँ सार हैं, कि जगत सार है ? इन सबमें सार क्या है ?

संसार का सार शरीर है। यदि आपका शरीर है तो आपके माल-मिल्कियत के दस्तावेज सच्चे हैं। आप एक बार मर गये और दुबारा जन्म लेकर पुनः अपने पूर्वजन्म के मकान में आकर कहो कि 'यह मकान तो मेरा है... मैं फलाना था...' तो नहीं चलेगा।

सारे संसार का सार शरीर है। शरीर का सार है इन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ एवं पाँच कर्मेन्द्रियाँ। इन्द्रियों का सार है मन। मन सो जाये तो इन्द्रियों से कोई चेष्टा नहीं होती। मन का सार है बुद्धि और बुद्धि का सार है जीवात्मा।

जीवात्मा किसको कहते हैं ? अंतःकरण में चैतन्य का जो प्रतिबिंब पड़ता है उसको जीवात्मा कहते हैं। अंतःकरण शरीर से जुड़ा है। अंतःकरण और शरीर में 'मैं' और 'मेरा' करके जीने की इच्छा जो चेतन करता है उसी चेतन का नाम जीव पड़ जाता है।

ईश्वर में भी वही चेतन है लेकिन वह अपने को ठीक से जानता है। इसीलिए जीव माया व अविद्या के वश होता है जबकि ईश्वर माया को वश में रखता है।

दोनों चेतन एक हैं। जैसे घड़े में रखा हुआ दीया एवं काँच के महल में रखा हुआ दीया, दोनों ज्योतिस्वरूप हैं, प्रकाशस्वरूप हैं लेकिन घड़े का दीया घड़े को भीतर-ही-भीतर प्रकाशित करता है, बाहर नहीं करता, जबकि काँच के महल में रखा हुआ दीया भीतर-बाहर दोनों ओर प्रकाशित करता है।

जो सहस्रनेत्रधारी इन्द्र होकर पूजा जा रहा है एवं जो भिखारी रोटी के लिए दर-दर की ठोकरें खा रहा है, वे दोनों हैं तो एक चेतन, लेकिन एक ने चंचल होते-होते हल्की गति को पा लिया और दूसरा संयम, यज्ञ, तप आदि करके महान् होकर पूजा जा रहा है।

कल्पना करो कि एक घड़ा है और उसमें दीया रखकर उसे ढँक दिया। घड़े में पाँच सुराख हैं और एक-एक सुराख पर एक-एक चीज रख दी गयी। अब पाँचों वस्तुओं को जो प्रकाशित करता है वह दीया तो एक है लेकिन पाँचों वस्तुएँ अलग-अलग हैं। इसी प्रकार देखने की इन्द्रिय नेत्र, सूँघने की इन्द्रिय नासिका, सुनने की इन्द्रिय कान, चखने की इन्द्रिय जीभ एवं स्पर्श की इन्द्रिय त्वचा- इन सबको जो प्रकाशित करता है वह चेतन एक है लेकिन अज्ञान के कारण उन देखने-सुनने आदि की वस्तुओं से मजा लेने की इच्छा करता है एवं इस शरीर में जीने की इच्छा करता है तो उसका नाम पड़ गया जीव।

ईश्वर सर्वज्ञ है, जीव अल्पज्ञ है। जो अपने

चैतन्यस्वरूप को नहीं जानता और माया-अविद्या के वश हुआ है वह जीव है। जो अपने चैतन्यस्वरूप को जानते हैं और माया को वश में रखते हैं वे ईश्वर हैं। बाकी ईश्वर का आत्मा एवं जीव का आत्मा, दोनों का मूल एक वही ब्रह्म है। जो जीव इसको ठीक से जान लेता है वह अपने को जीव नहीं मानता वरन् ब्रह्म मानता है।

ईश्वर की माया हटा दो, जीव की अविद्या हटा दो तो जीवात्मा और परमात्मा एक-का-एक है। आदिचेतन की जिनको विस्मृति नहीं हुई है, वे ईश्वर कोटि के हैं और जिनको विस्मृति हो गई है एवं संसार के सुखों में पड़ गये हैं वे जीव होकर नीचे गिरते-गिरते नीची योनियों में चले गये हैं।

आज जो साँप-मेढक आदि दिखते हैं वे भी कभी मनुष्य रहे होंगे एवं उससे पहले वे ब्रह्म थे लेकिन जैसा फुरना आया वैसा करते-करते नीच गति को प्राप्त हो गये हैं।

जो सहस्रनेत्रधारी इन्द्र होकर पूजा जा रहा है एवं जो भिखारी रोटी के लिए दर-दर की ठोकरें खा रहा है, वे दोनों हैं तो एक चेतन, लेकिन एक ने चंचल होते-होते हल्की गति को पा लिया और दूसरा संयम-यज्ञ-तपादि करके महान् होकर पूजा जा रहा है।

यह मानव के हाथ की बात है कि वासना के अनुसार सुख-भोग की ललक में भटककर वह नीच-से-नीच अवस्था और गतियों में गरकाव हो जाय अथवा पुरुषार्थ और दृढ़ संकल्प करके, ईश्वर के नाम का आश्रय लेकर, शुभ कर्म में रुचि रखकर एवं संतों का सहयोग लेकर अपना और अपनी सात पीढ़ी का उद्धार करे। यह उसके अपने हाथ की बात है।

*

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

आत्मनिरीक्षण के द्वारा परमात्मदर्शन आसान

कितने ही साधक-भक्त ऐसे हैं जो लम्बे अर्से से साधना कर रहे हैं। साधना में प्रगति के लिए साधक के जीवन में स्वयं का मूल्यांकन आवश्यक है। साधक को खुद ही अपना आत्म-विश्लेषण करना चाहिए। जितना ठीक ढंग से हम स्वयं अपना निरीक्षण कर सकते हैं उतना अन्य नहीं कर सकता, क्योंकि हम जितने अच्छे से अपने गुण-दोषों से, कमजोरियों से परिचित होते हैं, उतने अन्य व्यक्ति नहीं होते। जिज्ञासु साधकों को निम्नांकित प्रश्नों का उत्तर स्वयं ही खोजना चाहिए ताकि साधना में शीघ्र उन्नति हो :

साधना में प्रगति के लिए साधक के जीवन में स्वयं का मूल्यांकन आवश्यक है। साधक को खुद ही अपना आत्म-विश्लेषण करना चाहिए।

* साधना में रुचि दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है अथवा घट रही है या उदासीनता आ रही है ?

* सत्संग सुनने के बाद उसे जीवन में उतारने की जिज्ञासा भी है या नहीं ?

* ध्यान-भजन-सत्संग का लक्ष्य आपके लिए परमात्मा की प्राप्ति है या नश्वर संसार के क्षणभंगुर भोग ?

* शास्त्रवचन और संत-उपदेश में श्रद्धा है

या नहीं ?

❊ मंत्रदीक्षा के समय साधना की जो पद्धतियाँ बतायी गयी थीं, उनसे कितने लाभान्वित हुए हैं या याद ही नहीं है ?

अपने जीवन में किसी प्रकार की कमियाँ दिखें तो सुबह १०-१२ प्राणायाम करके, उन कमियों को निकालने के लिए सद्गुणों का विचार कीजिए।

❊ संसार के प्रति आकर्षण कम हुआ है या ज्यों-का-त्यों बना हुआ है ?

❊ कहीं आप सेवा-साधना के बहाने प्रशंसा के रोग से तो ग्रस्त नहीं हो गये हैं ?

❊ भोगों से मन उपराम हुआ है या अभी भी उनमें सुखबुद्धि बनी हुई है ?

❊ त्रिकाल संध्या का नियम माह में कितनी बार पूर्ण करते हैं ? ध्यान-भजन और सेवा के लिए दिनभर में कितना समय देते हैं ?

❊ क्या कभी प्रभु के साथ एकाकार हो जाने की तड़प मन में उठती है ?

❊ मंत्रजाप करते-करते कहीं आप मनोराज में तो नहीं उलझ जाते हैं ?

❊ चित्त की चंचलता, मन की मनमुखता शांत होकर अंतर का आराम प्रगट हो रहा है या नहीं ?

❊ सुख में सुखी और दुःख में दुःखी होने की प्रवृत्ति से निवृत्ति की ओर आप अग्रसर हो रहे हैं या नहीं ?

❊ सत्संग में जाने के बाद सत्संग का, मनुष्य जीवन का महत्त्व समझ में आया है अथवा रोजी-रोटी के लिए ही जीवन पूरा हो रहा है ?

❊ जीवन में निर्भयता, निश्चिंतता और प्रसन्नता जैसे उन्नति के परम गुणों का प्रादुर्भाव हो रहा है ?

❊ मौन, एकांत, अनुष्ठान के प्रति रुचि कितनी है ?

❊ उद्वेग के प्रसंग में आप कितना धैर्य और संयम रख पाते हैं ?

अपने जीवन में किसी प्रकार की कमियाँ दिखें तो सुबह १०-१२ प्राणायाम करके, उन कमियों को निकालने के लिए सद्गुणों का विचार कीजिए। इस प्रकार सद्गुणों का विचार करने से आपके दुर्गुण धीरे-धीरे निवृत्त होते जायेंगे एवं हृदय सद्गुणों से भरता जायेगा। सद्गुणों के विकास से सर्वगुणसंपन्न परमात्मा का दीदार करना भी आसान होता जायेगा।

❊

सब शूलों का मूल

यदि प्रतीति एवं प्राप्ति का थोड़ा रहस्य समझ में आ जाय तथा प्राप्ति में थोड़ी प्रीति हो जाय और प्रतीति का सदुपयोग करने की कला आ जाय तो ईश्वरप्राप्ति सुगम हो जाएगी।

धर्म, संप्रदाय एवं जातिवाद के नाम पर हो रहे दंगे-फसाद इन्द्रियगत ज्ञान के आदर का परिणाम है। जितने भी कुकर्म होते हैं वे सब इन्द्रियगत ज्ञान को महत्त्व देने के परिणाम हैं। यदि बुद्धिगत ज्ञान को महत्त्व दिया जाय तो धर्म एवं साम्प्रदायिकता के नाम पर हो रहे सभी विवादों का अंत हो जाएगा।

दो मरीजों के भिन्न-भिन्न रोग हैं तो दोनों की दवाई अलग-अलग होगी। दोनों का डॉक्टर भले एक ही हो फिर भी दोनों की दवाई भिन्न-भिन्न होगी क्योंकि दोनों के रोग भिन्न हैं। यदि रोग भी समान हों, डॉक्टर भी एक ही हों फिर भी दोनों की भिन्न-भिन्न क्षमता के कारण दवाई की मात्रा भिन्न-भिन्न होगी। लेकिन यदि वे आपस में लड़ें कि दोनों की एक ही जैसी तथा समान मात्रा की

धर्म, संप्रदाय एवं जातिवाद के नाम पर हो रहे दंगे-फसाद इन्द्रियगत ज्ञान के आदर का परिणाम है। जितने भी कुकर्म होते हैं वे सब इन्द्रियगत ज्ञान को महत्त्व देने का परिणाम है।

दवाई हो तो काम बनने के बजाय बिगड़ जाएगा।

इसी प्रकार सबका एक ही लक्ष्य ईश्वरप्राप्ति होने पर भी सबके मार्ग, मत, पंथ भिन्न-भिन्न है, क्योंकि हर व्यक्ति की अपनी-अपनी योग्यता, रुचि एवं क्षमता होती है। जिन लोगों के जीवन में बुद्धिगत ज्ञान का आदर है ऐसे लोग अपने-अपने अधिकार के अनुसार साधन भिन्न-भिन्न होते हुए भी आपस में व्यर्थ के विवाद को महत्त्व नहीं देते। जो लोग इन्द्रियों के विषयों में ही रमे हुए हैं वे कहते हैं कि सारे-के-सारे इस्लाम में आ जाओ, सारे-के-सारे ईसाई बन जाओ अथवा सबके-सब हिन्दू हो जाओ।

इस प्रकार के जो भी झगड़े होते हैं उनका कारण बुद्धिगत ज्ञान का अनादर करना ही है। वास्तव में धर्म के कारण झगड़े नहीं होते। झगड़े वे लोग नहीं करवाते जो सचमुच में धर्मात्मा होते हैं। स्वार्थी लोग धर्मात्माओं की भावनाओं का दुरुपयोग करके झगड़ा करवाते हैं।

जिन देशों में एक ही धर्म के लोग रहते हैं वहाँ भी झगड़े होते रहते हैं। कभी काले-गोरों के नाम पर तो कभी उदारपंथी व कट्टरपंथी के नाम पर। झगड़े चाहे किसी भी नाम पर होते हों किन्तु ये सब फसाद इन्द्रियगत ज्ञान को सत्य माननेवाले लोगों के द्वारा ही होते हैं फिर चाहे वह कोई भी देश हो। अर्थात् इन्द्रियगत ज्ञान का आदर करना ही सब दुःखों और झगड़ों का मूल है। इसलिए इन्द्रियगत ज्ञान को महत्त्व न देकर बुद्धिगत ज्ञान का आदर करना चाहिए तथा प्रतीतिरूप संसार का सदुपयोग करके सदा प्राप्त अपने आत्मा को जान लेना चाहिए। इसीमें सबका मंगल एवं कल्याण है। *

कर्म का फल भोगना ही पड़ता है

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

अनेकचित्तविभ्रांता मोहजालसमावृताः।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ ॥

'कामनाओं के कारण तरह-तरह के भ्रमित चित्तवाले, मोहजाल में अच्छी तरह से फँसे हुए तथा पदार्थों और भोगों में अत्यंत आसक्त रहनेवाले मनुष्य भयंकर नरकों में पड़ते हैं।'

(गीता : १६.१६)

> *मनुष्य अगर सावधान होकर सत्त्वगुण नहीं बढ़ाता है अपितु जो आया सो खा लिया, जो मन में आया सो कर लिया और इसी तरह विषय-विकार और पापों में, बुराइयों में जिंदगी बिता दी तो उसे भयंकर नरकों में जाना पड़ता है, खूब दुःखद दुष्ट योनियों में गिरना पड़ता है।*

मनुष्य अगर सावधान होकर सत्त्वगुण नहीं बढ़ाता है अपितु जो आया सो खा लिया, जो मन में आया सो कर लिया और इसी तरह विषय-विकार और पापों में, बुराइयों में जिंदगी बिता दी तो उसे भयंकर नरकों में जाना पड़ता है, खूब दुःखद दुष्ट योनियों में गिरना पड़ता है। इसलिए मनुष्य को अपना भविष्य अंधकारमय नहीं होने देना चाहिए। जैसी हालत सुलेमान प्रेत की हुई, ऐसी हालत एक प्रेत की नहीं, कइयों की होती है।

यह घटित घटना है : सुलेमान प्रेत को बंधन कैसे मिला और उसकी मुक्ति कैसे हुई ? इस

बात को जानकर हमें बहुत कुछ सीखने को मिलेगा।

सिक्खों के गुरु राड़ावाले संत ईश्वरसिंह महाराज के यहाँ मनमोहन नाम के बालक को लेकर उसके माता-पिता आये। मनमोहन को एक प्रेत ने सताया था। उस प्रेत से जो बातें पूछी गईं, वे रोमांचकारी भी हैं और आश्चर्यकारक भी। इसके साथ ही ये बातें हमारे पवित्र पुराणों की सत्यता की पुष्टि करनेवाली भी हैं।

''अगर हम किसी मनुष्य शरीर में घुस गये और वह बंदा संत के शरण में जाय और संत उसे स्वीकार कर लें कि 'तुम बैठो, सत्संग सुनो, तुम्हारा कल्याण होगा...' तब उसके शरीर में रहकर हम अपना कल्याण कर सकते हैं।''

ईश्वरसिंह महाराज ने उस बालक मनमोहन को एकांत कक्ष में ले जाकर उसके शरीर में प्रवेश किए हुए प्रेत से पूछा : ''तू इसमें घुसा है तो आखिर तू है कौन ?''

उसने कहा : ''मैं प्रेत हूँ।''

''तेरा नाम क्या है ?''

''मेरा नाम सुलेमान है।''

''सच बता, तू कहाँ का है ?''

''मैं ईरान का हूँ।''

''तू ईरान का है तो इधर कैसे आया ?''

''जब नादिरशाह अब्दाली भारत को लूटने के लिये यहाँ आया था तब उसके साथ मैं भी हिन्दुस्तान चला आया। वह तो भारत को लूटकर चला गया लेकिन मैं रह गया। मैंने एक औरत को पटाकर उसके साथ शादी कर ली।''

''फिर क्या हुआ ?''

''मैं उस औरत के साथ रहने लगा। मेरे दो बच्चियाँ और दो बच्चे हुए। उनमें से मेरी एक खूबसूरत युवती लड़की का संबंध किसी हिन्दू तांत्रिक के साथ हो गया था। वह टूणे-टोटके का काम भी करता था और पाखंड भी रचता था। मैंने लड़की को बहुत समझाया कि उसके साथ संबंध न रखे लेकिन वह नहीं मानी। उधर तांत्रिक को भी धमकाया लेकिन मैं उसमें सफल नहीं रहा। उस जमाने के शासकों से मिला और शासन की ओर से प्रयत्न करवाया लेकिन उसमें भी मुझे सफलता नहीं मिली। इसकी चिंता में मैं बीमार हो गया। बुढ़ापा भी नजदीक आ रहा था। ऐसी हालत में मेरा मृत्युकाल निकट आ गया।

''अच्छा, सुलेमान ! तो तुम्हारी मृत्यु कैसे हुई यह बताओगे ?''

''हाँ। मेरी आँखों से झर-झर पानी बहने लगा। मेरी जबान बंद हो गई। दिल में प्रतिशोध की आग मुझे तपा रही थी। 'हे खुदाताला ! तेरी रहमत चाहता हूँ कि जिस तांत्रिक ने मेरी सुंदर लड़की के साथ गलत संबंध जोड़ा है उस तांत्रिक को कैसे भी करके ठीक करने का कोई मौका मिल जाय।' इस प्रकार प्रतिशोध की आग में तपते-तपते, प्रार्थना करते-करते मेरे प्राण निकल गये।''

''प्राण निकलते वक्त तुमने क्या देखा सुलेमान ?''

''मैंने चार यमदूत देखे। वे छाया पुरुष थे। उनका साकार रूप नहीं था।''

पापियों को यमदूत दिखते हैं या तो जिनके कर्म कुछ टेढ़े-मेढ़े होते हैं उनको दिखते हैं। कई लोगों को उनके दर्शन होते हैं तब वे समझ लेते हैं कि अपना मृत्युकाल आ गया है।

मेरी माँ ने बताया था कि मेरे पिता को भी यमदूत दिखे थे। उस वक्त मेरे पिता बोल रहे थे कि : 'ये दो काले-काले कौन हैं ?' फिर मेरे लिये बोले कि : 'आसुमल छोटा है। उसको अभी नहीं बुलाना। बड़े को बुला लो। चौका करके मुझे सुला दो। मेरे मुँह में तुलसी के पत्ते डालो और गीता पढ़ो।'

जो दो काले-काले दिखते थे वे यमदूत थे।

मेरे एक मित्र संत हैं लालजी महाराज। उन्होंने कई अनुष्ठान किये, चौबीस साल तक मौन रहे। उनका एक भक्त अचानक दुर्घटना के कारण बहुत घायल हो गया और मौत की घड़ी गिन रहा था। लालजी महाराज वहाँ पहुँचे। थोड़ी बातचीत के बाद वह भक्त चीखा : ''महाराज ! महाराज ! मैं मरा... वे मुझे लेने को आये हैं।''

''तुम काला इलम करते थे, प्रेतों को सताते थे, प्रेतों को निकालते थे, परस्त्रीगमन करते थे और दूसरे काले कर्म करते थे, इससे तुम्हें हजार वर्ष तक प्रेतयोनि में भटकना पड़ेगा।''

महाराज ने पूछा : ''कहाँ हैं ?''

भक्त : ''मेरी खाट के पाये के आगे।''

महाराज उधर गये।

भक्त : ''महाराज ! वे दाँये आ गये।''

महाराज वहाँ गये।

भक्त : ''महाराज ! अब वे सिरहाने आ गये।''

महाराज ज्यों-ज्यों घूमते गये त्यों-त्यों वे यमदूत भी अपनी जगह बदलते गये। महाराज ने भगवन्नाम-कीर्तन किया। आसपास में अपनी दृष्टि फैलाई और शुभ संकल्प किया। फिर वह भक्त बोला : ''महाराज ! वे गये।'' उसकी अकाल मृत्यु टल गई। बाद में वह आदमी कई वर्षों तक जीवित रहा।

''हम मजार में रहते थे। वहाँ लोग आते थे। हालाँकि वहाँ तो हमारा माँस सड़ा हुआ होता है, बदबू आती है, लेकिन कामना और मोह के कारण अंधे हुए लोग वहाँ मत्था टेकते हैं।''

यह तो अभी की, इस जमाने की बात है। महाराज अभी विद्यमान हैं। उनका वह भक्त बहेरामपुरा, अहमदाबाद में था। वह सिटी बस में ड्राइवर था और किसी सड़क-दुर्घटना में उसकी ऐसी दशा हुई थी। अब वह जीवित है कि नहीं, जाँच करें तो पता चले।

हमारे पवित्र पुराणों की बात इन घटनाओं से और पुष्ट होती हैं।

सुलेमान ने कहा : ''मैंने चार बड़े डरावने यमदूत देखे। मैं तो इस देह से अपनी रुह निकालना नहीं चाहता था लेकिन उन्होंने मेरी पिटाई की और बलात् मुझे निकालकर ले चले। मारते-पीटते, यातना देते-देते यमदूत मुझे यमराज के पास ले जाने लगे। वहाँ पहुँचाने में एक साल का अंतर रखा। साल भर के बाद मैं वहाँ पहुँचा।''

''फिर क्या देखा ?''

''यमराज ने अपने फरिश्ता चित्रगुप्त को बुलाया और उसने मेरे कर्मों की कहानी सुनाई। मेरे कर्मों की कहानी सुनकर यमराज ने मुझे कुंभीपाक नरक में भेजने की आज्ञा दी और मुझे कुंभीपाक नरक में ले जाया गया।''

''वहाँ क्या होता है ? क्या तुम ठीक से, सच्चाई से बता सकते हो ?''

''हाँ... हाँ... वह धरती से ८६ हजार योजन लंबा-चौड़ा नरक है। इस शरीर में जो मसाला भरा पड़ा है, वही वहाँ नरक में खुला पड़ा है। विष्ठा, मल-मूत्र, थूक, लीद-चमड़ा सब तपा हुआ एवं अत्यंत दुर्गंधयुक्त था। उसमें प्रवेश करने का द्वार मात्र ९ ईंच का ही है। पापियों को पाप का दण्ड देने के लिये भोग-योनि बनायी जाती है। उसे भोगमय शरीर मिलता है। उसे अग्नि में डालो तो जलकर राख नहीं होता है, वरन् अग्नि के ताप की पीड़ा सहता है। उसे मारो और टुकड़े कर दो तो फ्रैक्चर नहीं होता है लेकिन उन सबकी पीड़ा सहते हुए वह ज्यों-का-त्यों रहता है। वहाँ उस भोग शरीर में मैंने बहुत दुःख भोगे। उसके बाद यमराज ने कहा : ''तुम काला इलम करते थे, प्रेतों को सताते थे, प्रेतों को निकालते थे, परस्त्रीगमन करते थे और दूसरे काले कर्म करते

थे। इससे तुम्हें हजार वर्ष तक प्रेतयोनि में भटकना पड़ेगा। बाद में तुम खुदाताला से प्रार्थना करते-करते जिस तांत्रिक से बदला लेने की भावना रखकर मरे थे, उसका बदला ले सकोगे।''

''तो तुम्हारे हजार वर्ष अभी तक पूरे नहीं हुए क्या ?''

''नहीं, अब पूरे होनेवाले हैं। मैं प्रेतयोनि पाकर सहरानपुर जिले के मुगलखेड़ा गाँव के कब्रिस्तान में, जहाँ मेरी कब्र बनी थी, वहाँ रहने लगा। वहाँ मेरे साथ पाँच और प्रेत भी रहते थे। एक की उम्र पौने तीन हजार वर्ष की है, दूसरे की तीन हजार वर्ष, तीसरे की साढ़े तीन हजार वर्ष, चौथे की पाँच हजार वर्ष और पाँचवें प्रेत की उम्र चार युग की है।''

गीता का श्लोक कितनी सच्चाई का दर्शन कराता है !

अनेकचित्तविभ्रांता मोहजालसमावृताः।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ॥

सुलेमान प्रेत ने आगे कहा :

''हम मजार में रहते थे। वहाँ लोग आते थे। हालाँकि वहाँ तो हमारा माँस सड़ा हुआ होता है, बदबू आती है, लेकिन कामना और मोह के कारण अंधे हुए लोग वहाँ मत्था टेकते हैं। हम प्रेत तो उन्हें देख सकते हैं लेकिन वे हमें नहीं देख पाते हैं। उसमें कोई ऐरा-गैरा आये और मजार के आगे गड़बड़ करे तो हम उसे मार देते। ऐसे कई लोगों को हमने मारा। यह लड़का मनमोहन भी वहाँ आया और उसने मजार पर पेशाब कर दिया लेकिन मैंने उसे मारा नहीं। मैंने गौर से देखा तो उसका सूक्ष्म शरीर, उसकी रुह वही तांत्रिकवाली थी। स्थूल शरीर तो मर जाता है लेकिन सूक्ष्म शरीर हजारों-लाखों जन्म लेने के बाद भी नहीं मरता।

यही मेरा वह शत्रु है जिसके लिये प्रतिशोध की आग में मैं जल रहा था। अतः इसे मैं जल्दी क्यों मारता ? अब हाथ में आया तो मैं कैसे छोड़ता ? मैं इस मनमोहन के अंदर घुस गया। पिछले सात सालों में मैंने इसे खूब सताया है। अब मेरा बदला पूरा हो गया है और मेरा समय भी पूरा हो गया है। इसीलिए आप जैसे संत के द्वार पर पहुँचा हूँ। अब आपकी रहमत से प्रेतयोनि से मेरा छुटकारा होगा।''

“अपनी पत्नी होते हुए भी जो परस्त्रीगामी थे उनको तप्त लोहे की स्त्रियों से बलात् आलिंगन कराया जाता था और जो अपने पति को छोड़कर पर-पुरुष से रमण करती थीं, ऐसी स्त्रियों को तप्त लोहे के पुरुषों के साथ आलिंगन कराया जाता था।''

''सुलेमान ! तुम मनमोहन के अंतःकरण में आ गये और संत के चरणों तक पहुँच गये। अब श्रद्धा-भक्ति रखकर सत्संग सुनोगे तो मानो तुम्हारा उद्धार हो ही गया। किन्तु सुलेमान ! यह तो बताओ कि प्रेत लोग क्या खाते हैं, कहाँ रहते हैं और क्या करते हैं ? यह तुम बता सकते हो क्योंकि तुम हजार वर्ष पुराने हो, अतः अनेक अनुभवों से गुजरे होगे।''

''हाँ, भूख लगती है तब लकड़ी के कोयले चबा लेते हैं, विष्ठा खा लेते हैं, पेशाब पी लेते हैं। हमें केवल गंदी चीजों में जाने की अनुमति होती है।''

अगर हर जगह जाने की, सब कुछ खाने की, कुछ भी करने की अनुमति होती तो मिठाईवाले की मिठाइयाँ दुकान में कैसे रह सकती थीं ? प्रेत उठाकर स्वाहा कर लेते। उनके ऊपर प्रकृति का, ईश्वर का प्रतिबंध नहीं होता तो वे सत्संग भी नहीं करने देते।

''अच्छा, सुलेमान ! तुम मंदिर में, कथा-कीर्तन में जा सकते हो ?''

''नहीं। वहाँ जाने का हुक्म नहीं है। जहाँ

सत्संग या पवित्र कर्म करनेवाले आ जाते हैं वहाँ मानो हमारे लिये एक आग खड़ी हो जाती है। हम और तपते हैं । अतः हम उस जगह को छोड़कर भाग जाते हैं।''

''फिर तुम्हारा उद्धार कैसे हो सकता है ? अथवा अन्य प्रेतों का एवं वह प्रेत जो मुगलखेड़ा गाँव में मजार में चार युगों से सड़ रहा है उसका भला कैसे हो सकता है ?''

''अगर हम किसी मनुष्य शरीर में घुस गये और वह बंदा संत के शरण में जाय और संत उसे स्वीकार कर लें कि 'तुम बैठो, सत्संग सुनो, तुम्हारा कल्याण होगा...' तब उसके शरीर में रहकर हम अपना कल्याण कर सकते हैं।''

''वह जो चार युगों से पड़ा है उसका कल्याण कैसे होगा ?''

''जैसे मुझे मनमोहन मिल गया वैसे उसे कोई मनुष्य मिल जाय जिसके द्वारा वह संत के द्वार तक पहुँच जाय तो कल्याण हो सकता है। नहीं तो भगवान अवतार लेनेवाले हैं- कल्कि अवतार। उनकी रहमत से बाकी के सब प्रेतों का भला होना निर्धारित है।''

''जीवों का कल्याण कैसे हो ?''

''अपने-अपने सद्‌गुरु के द्वारा जो मंत्र मिला है, उस मंत्र का जप करने से जीवों का कल्याण होता है।''

''अच्छा, सुलेमान ! तुमने यमराज को देखा है ? यमराज तुमको कैसे लगे ?''

''श्वेत दुग्ध से भी उज्ज्वल एवं लंबी दाढ़ी और विशाल कायावाले यमराज का व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली था। वे बड़े रोबदार थे, ऊँची समझ के धनी थे और अपनी काया पलटने का सामर्थ्य भी रखते थे।''

खैर ! यह सामर्थ्य तो उन लोगों में होता ही है। देवताओं में भी होता है। वे इच्छानुसार रूप बदलने में समर्थ होते हैं।

अरे ! इस धरती पर रहनेवाले भी यदि योगाभ्यास करते हैं तो उनमें भी बड़ा सामर्थ्य आ जाता है। गिरनार के योगी शेर का रूप भी धारण कर लेते हैं। साधारण मनुष्य भी स्वप्न में शेर बना लेते हैं, न जाने और क्या-क्या बना लेते हैं ! आपकी आत्मा में और सूक्ष्म शरीर में अथाह शक्ति है। कल्पना के जगत में आप बहुत कुछ कर सकते हैं। ऐसे ही वे देवता आदि ठोस संकल्प से बहुत कुछ कर सकते हैं।

सुलेमान ने कहा : ''मैंने अपने काले इलम का और बुरी इच्छाओं का यह बहुत बुरा फल पाया है।''

सुलेमान प्रेत से यह भी पूछा गया :

''कुंभीपाक नरक में और क्या देखा ?''

''अपनी पत्नी होते हुए भी जो परस्त्रीगामी थे उनको तप्त लोहे की स्त्रियों से बलात् आलिंगन कराया जाता था। जो अपने पति को छोड़कर पर-पुरुष से रमण करती थीं, ऐसी स्त्रियों को तप्त लोहे के पुरुषों के साथ आलिंगन कराया जाता था।''

कर्म का फल तो भोगना ही पड़ता है। चाहे इसी जन्म में, चाहे दो जन्मों के बाद, चाहे हजार जन्मों के बाद भी कर्म का फल भोगना ही पड़ता है।

हजारों वर्ष नरकों में पड़ने के बजाय २-५ साल पवित्र जीवन बिताना कितना हितकारी है !

यह मनुष्य जन्म एक चौराहे के समान है। यहाँ से सारे रास्ते निकलते हैं। आप सत्कर्म करके देवत्व लाओ, स्वर्ग के अधिकारी बनो अथवा तो ऐसे कर्म करो कि यक्ष, किन्नर, गंधर्व बन जाओ या ऐसे घृणित कर्म करो कि ब्रह्मराक्षस बन जाओ... आपके हाथ की बात है। जप-ध्यान-भजन, संतों का संग आदि करके ब्रह्म का ज्ञान पाकर मुक्त हो जाओ... यह भी आपके ही हाथ की बात है। फिर कोई कर्मबंधन आपको बाँध नहीं सकेगा।

*

मेरा मुझमें कुछ नहीं...

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

स्वामी रामतीर्थ एक जमाईराज की बात सुनाया करते थे :

एक युवक अपने ससुराल पहली बार ही जा रहा था इसलिए पत्नी व सास-ससुर के लिए मेवा-मिठाई आदि सामान साथ में ले जा रहा था। एक बैग, मिठाई के कुछ डिब्बे और थोड़ा-बहुत सामान लेकर वह घोड़े पर सवार हुआ।

थोड़ा ही रास्ता कटा था कि भोले नौजवान ने सोचा : 'बेचारे घोड़े की क्या दुर्दशा हो रही है ! एक तो गर्मियों के दिन हैं, ऊपर से मैं बैठा हूँ... मेरा वजन और इतना सारा सामान लदा हुआ है उसका बोझ...'

वह मूर्ख नौजवान घोड़े पर से नीचे उतरा और सारा सामान अपने कंधे पर बाँधना शुरू कर दिया । नौजवान ने अपना बिस्तर पीछे पीठ पर बाँधा और मिठाई के डिब्बोंवाला थैला भी पीठ पर बाँध लिया। कुछ सामान बगल में लटकाया, कुछ अपने सिर पर रखा तो कुछ अपने कंधे पर रखा। इस प्रकार नौजवान ने सारा सामान अपने पर ऐसे लाद दिया जैसे खच्चर पर सामान लादा जाता है। इतना सारा सामान अपने ऊपर लादकर फिर वह घोड़े पर बैठा और सोचने लगा कि : 'चलो, भले मुझे तकलीफ सहनी पड़ रही है किन्तु इस बेचारे घोड़े को तो थोड़ा आराम मिलता है न !'

> *यह सृष्टि तुम्हारी बनायी हुई नहीं है और सारी सृष्टि का भार तुम पर नहीं है। जिसकी बनायी हुई यह सृष्टि है और जिस पर सारी सृष्टि का भार है उस परमात्मा की शरण जाकर फिर तुम जो कुछ करोगे वह ठीक ही होगा।*

जमाई अपने ससुराल के गाँव पहुँचा तब तक तो उसकी हड्डी-पसली एक हो गई। सारा शरीर थक गया। शाम का वक्त था। ससुरजी अपने जमाईराज की राह देखते हुए ही खड़े थे। इतने में अपने जमाईराज को आते हुए देखकर ससुरजी बोले :

''आओ जमाईराज ! ... परंतु आपने यह क्या हालत बना रखी है ?''

जमाई : ''ससुरजी ! वह सब बाद में बताऊँगा। पहले आप एक खटिया ले आइए।''

ससुरजी ने तुरंत खटिया ला दी। जमाई घोड़े पर से नीचे उतरकर, सामान को ऐसे ही एक ओर रखकर सीधा खटिया पर जा गिरा। वह ऐसे लेटा कि मानो कोई लाश हो।

ससुराल में सब चिन्तित हो गए अपने जमाईराज की ऐसी स्थिति देखकर।

ससुरजी : ''जमाईराज ! आखिर आपके ऐसे हाल-बेहाल क्यों हो गए ?''

जमाई : ''ससुरजी ! भला यह घोड़ा मेरा बोझ और ऊपर से इतने सारे सामान का बोझ कैसे उठाता ? मुझे घोड़े पर दया आ गई। इसलिए मैंने सारा सामान अपने ऊपर लाद लिया ताकि घोड़े को आराम मिले।''

ससुरजी : ''अरे बुद्धू जमाईराज ! सारा सामान अपने सिर पर लादकर भी तुम बैठे तो घोड़े पर ही न ? तो पूरे का पूरा बोझ तो घोड़े पर

ही था। नाहक तुमने अपने सिर पर बोझ लादकर अपने बुरे हाल कर लिये।''

जिस प्रकार सारा वजन उठानेवाला घोड़ा हीं था लेकिन अपने को वजन उठानेवाला समझकर उस नौजवान ने अपनी दुर्दशा की, उसी प्रकार सारे विश्व को चलानेवाले विश्वंभर के होते हुए भी मनुष्य समझता है कि 'मैंने किया।' डॉक्टर समझता है कि 'मैंने मरीज को ठीक किया...' परंतु भोले डॉक्टर साहब ! यह नहीं सोचते कि तुमने तो सिर्फ जख्म साफ कर दिया, पट्टी लगा दी लेकिन घाव भरनेवाला, नई चमड़ी देनेवाला तो वह भगवान ही है।

जिस प्रकार सारा वजन उठानेवाला घोड़ा ही था लेकिन अपने को वजन उठानेवाला समझकर उस नौजवान ने अपनी दुर्दशा की, उसी प्रकार सारे विश्व को चलानेवाले विश्वंभर के होते हुए भी मनुष्य समझता है कि 'मैंने किया।'

इसी प्रकार तुम सोचते हो कि तुम्हारी वजह से सारा घर चल रहा है। तुम कमाकर लानेवाले न होते तो घर के लोग भूखे मर जाते क्या ? अरे, पशु-पक्षियों के खाने का इन्तजाम भी वह ईश्वर कर देता है तो क्या उन लोगों का नहीं करेगा ? अपने को कर्त्ता मानकर बेटे की चिंता, बेटी की चिंता, बहू की चिंता, पैसों की चिंता क्यों करते हो ?

''मुल्लाजी ! दुबले क्यों हो ?''

''सारे गाँव की फिक्र है।''

अरे कमबख्त ! तेरे फिक्र करने से सारे गाँव का भला हो जाएगा क्या ? फिकर फेंक कुएँ में।

मुर्दे को प्रभु देत है कपड़ा लकड़ा आग।
जिंदा नर चिंता करे ताके बड़े अभाग॥

'करन-करावनहार मेरे ठाकुरजी हैं...' ऐसा करके पूजा करते हो तो उस दिन तुम्हें पूजा में, जप में रुचि होने लगती है, ध्यान में मजा आने लगता है, सेवा में सांत्वना मिलने लगती है। तुम्हारा सारा दिन पूजा का प्रसाद बनकर तुमको आनंदित करता हुआ संसार के दुःख से तुम्हारी रक्षा करता है।

चिंता न कर, चिंतन कर इस बात का कि : 'दिल में जो दिलबर बैठा है, जो अंतर्यामी परमेश्वर सबका प्रेरक है, सबका पोषक है, जिसकी सत्ता से पंचमहाभूत का शरीर कार्यरत है उसको मैं कब जानूँगा ?' अपने को कभी कर्म के कर्त्ता न मानो। कर्त्ता, धर्त्ता, भर्त्ता और भोक्ता सब कुछ परमात्मा ही है। यह सृष्टि तुम्हारी बनायी हुई नहीं है और सारी सृष्टि का भार तुम पर नहीं है। जिसकी बनायी हुई यह सृष्टि है और जिस पर सारी सृष्टि का भार है उस परमात्मा की शरण जाकर फिर तुम जो कुछ करोगे वह ठीक ही होगा।

कबीरजी ने कहा है :

मेरो चिंत्यो होत नहीं, हरि को चिंत्यो होय।
हरि को चिंत्यो हरि करे, मैं रहूँ निश्चिंत॥

भगवद्गीता में श्रीकृष्ण ने भी अर्जुन से कहा है कि :

'तुम अपने अहं की, अपनी मान्यताओं की, अपने देहाध्यास की शरण छोड़कर मुझ अंतर्यामी परमात्मा की शरण में आ जाओ तो तुम परम शांति को और अविनाशी परम पद को प्राप्त हो जाओगे।'

भगवान को ही कर्त्ता और भोक्ता मानना यह शरणागति है। किसी भिखारी को तुमने अन्न खिलाया फिर कहो कि 'बेचारे भिखारी को मैंने अन्न दिया। यदि मैं अन्न न देता तो उसका क्या होता ?' यह तुम्हारी तामस वृत्ति है। राजस वृत्तिवाला सोचता है कि 'आज भिखारी को अन्न खिलाया। चलो, भगवान

ने मुझे सेवा का मौका दिया । प्रभु ! तेरी जय हो ।' जबकि सात्त्विक वृत्तिवाला कहता है कि 'मैं तो निमित्तमात्र था । इन हाथों को सत्ता देनेवाला वह परमात्मा ही था और दिया तो भिखारी को, लेकिन भिखारी के रूप में मेरा परमेश्वर ही था । भिखारी के रूप में भी संतुष्ट तो मेरा परमात्मा ही हुआ ।'

जब-जब कर्मों के पीछे भगवान का हाथ मानते हो तब-तब तुम सफलता पाते हो ।

तुमने अपनी माँ की सेवा की या किसी अतिथि की सेवा की, लेकिन 'माता के रूप में या अतिथि के रूप में वास्तव में वह अंतर्यामी परमात्मा ही सब कुछ ले रहा है, दे रहा है...' ऐसा भाव करने से तुम्हारा हृदय पावन हो जाएगा । 'बेचारी माँ की सेवा की... बेचारे अतिथि की सेवा की...' ऐसा नहीं । बेचारे जो दिख रहे हैं वे तो उनके बाहर के रूप हैं । वास्तव में तो सबके भीतर अंतर्यामी परमात्मा ही विराजमान हैं । वे ही सब कर्मों के कर्त्ता हैं और वे ही भोक्ता भी हैं ।

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम् ।

जब-जब कर्मों के पीछे भगवान का हाथ मानते हो तब-तब तुम सफलता पाते हो । लेकिन 'मैं पूजा कर रहा हूँ... आज मैं विधिवत् बढ़िया पूजा करूँगा...' ऐसा भाव आया तो उस दिन बढ़िया पूजा नहीं होती । कुछ-न-कुछ गड़बड़ जरूर होती है । जब पूजा करते हुए भगवान को प्रेम करते हो, भगवान के होकर, भगवान का स्मरण करते हुए ध्यान करते हो तब तुम करनेवाले नहीं बचते हो । 'करन-करावनहार मेरे ठाकुरजी हैं...' ऐसा करके पूजा करते हो तो उस दिन तुम्हें पूजा में, जप में रुचि होने लगती है, ध्यान में मजा आने लगता है, सेवा में सांत्वना मिलने लगती है । तुम्हारा सारा दिन पूजा का प्रसाद बनकर तुमको आनंदित करता हुआ संसार के दुःख से तुम्हारी रक्षा करता है ।

केवल एक-दो घण्टे बैठकर माला की, ध्यान-भजन किया और बाईस घण्टे अहंकार को सजाने में लगाये तो साधना में कोई बरकत नहीं होती है ।

जब-जब तुम जाने-अनजाने परमात्मा की शरण होते हो तो तुम्हारा कार्य दिव्य बनता है तथा निश्चिंततापूर्वक संपन्न होता है और कार्य करने के बाद भी भीतर माधुर्य छलकता है । जब-जब तुम अपने सिर पर कुछ चिंता लेकर, अहं लेकर, ईर्ष्या-द्वेष के भाव को भरकर कर्म करते हो तो तुम्हारा कर्म दुःखद हो जाता है, जटिल हो जाता है और परिणाम भी...

कर्म करने से पहले उत्साह होता है । कर्म करते समय पौरुष होता है और कर्म करने के बाद अंतःकरण में फल होता है । कुर्सी (पद) फल नहीं है, लड्डू फल नहीं है, बल्कि शुभ कर्मों का फल अंतःकरण में शांति, सरलता, आनंद और प्रभु के प्रसाद के रूप में फलित होता है । अशुभ कर्मों का फल अंतःकरण में अशांति, गरकाव एवं फटकार के रूप में फलित होता है । भगवान को कर्त्ता और भगवान को ही भोक्ता मानकर कर्म करने से हृदय में आंतरिक प्रसन्नता का प्राकट्य होता है ।

ऑफिसर, अमलदार या किसी व्यक्ति की योग्यता हो या न हो लेकिन प्रशंसा करनेवाले अपना उल्लू सीधा करवाने के लिए ऐसा भी कह देते हैं :

''साहब ! आप तो हमारे भगवान हो, हमारे खुदा हो, मालिक हो, यह हो... वह हो...''

ऐसा सुनकर साहब भी वाहवाही के चक्कर में फँसकर समझता है कि 'मैं ही उनका एकमात्र आधार हूँ ।' परंतु जब वही साहब सेवानिवृत्त होता है तो उस साहब को फिर कोई पूछता तक नहीं । सबका सच्चा साहब तो एकमात्र परमात्मा ही है । कोई तुम्हें चढ़ाता हो कि 'अरे भाई ! तुम तो बड़े

आदमी हो...' तब तुम समझना कि तुम बड़े नहीं हो। बड़ा तो वही है जिसकी सत्ता से तुम्हारे दिल की धड़कनें चल रही हैं... जो तुम्हारे मन और इन्द्रियों का संचालन कर रहा है।

केवल एक-दो घण्टे बैठकर माला की, ध्यान-भजन किया और बाईस घण्टे अहंकार को सजाने में लगाये तो साधना में कोई बरकत नहीं होती है। सावधान होकर अपने चित्त को एकाग्र करके एक-दो घण्टे जप-ध्यान करना अच्छा है लेकिन बाद में चलते-फिरते भी जो कुछ क्रिया-कलाप होते हैं उन सब में भी 'अंतर्यामी परमात्मा का ही सबमें हाथ है। वही परमात्मा सब कर्मों का कर्त्ता-भोक्ता है...' ऐसा चिंतन होने लगे तो कुछ ही दिनों में तुम निरहंकार पद को पाकर परमात्मा का साक्षात्कार करके जीवन्मुक्त भी हो सकते हो।

भगवान को ही समस्त कर्मों का कर्त्ता-भोक्ता माननेवाले किन्हीं महापुरुष के श्रीमुख से ही ये वचन निकले होंगे कि :

मेरा मुझमें कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझको देत हूँ, क्या लागत है मोर॥

तुम भी हृदयपूर्वक इन वचनों का अनुसंधान करते जाओ... आगे बढ़ते जाओ... परमात्मा का प्रसाद पाते जाओ।

*

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।
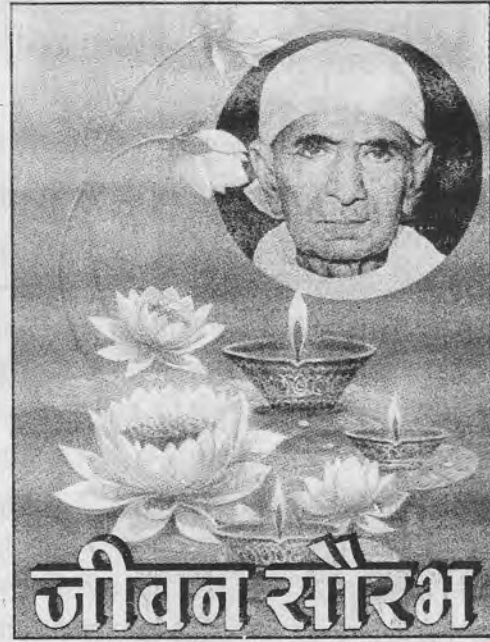
योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ
प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

[गतांक का शेष]

पूज्य स्वामीजी तीन सप्ताह तक यात्रा करके ८ फरवरी को वापस सिंगापुर पधारे। वहाँ वे रोज सुबह-शाम सत्संग करते। १२ फरवरी, रविवार को सुबह ११ से १२ बजे तक श्री रामकृष्ण आश्रम में सत्संग किया। श्रोताओं पर उसका हृदयस्पर्शी प्रभाव पड़ा। आश्रम के मुख्य संचालक स्वामी सिद्धान्तानंद पूज्य स्वामीजी के प्रवचनों से काफी प्रभावित हुए। उन्होंने उस दिन आये हुए भक्तों को सामूहिक भोजन भी करवाया। पूज्य स्वामीजी ने विनोद से परिपूर्ण किन्तु ज्ञानप्रधान एक छोटी-सी वार्ता सुनाते हुए बताया कि भक्ति किसकी करनी चाहिए। उन्होंने कहा :

''एक प्रेमी भक्त भगवान शंकर की भक्ति

करता था। एक दिन पूजा करते-करते उसने भगवान की मूर्ति पर एक चूहे को चलते देखा । यह देखकर उसके मन में विचार आया : 'अरे ! भगवान शंकर से तो चूहा बड़ा है !' अतः वह चूहे का उपासक बन गया। थोड़े दिनों के बाद उसने देखा कि एक बिल्ली उस चूहे को खा गयी। अब वह बिल्ली को बड़ा मानने लगा। कुछ दिनों के बाद देखा कि एक कुत्ता उस बिल्ली के पीछे पड़ा है और बिल्ली जान बचाकर भाग खड़ी हुई। अब वह कुत्ते में श्रद्धा रखने लगा। फिर एक दिन उसने देखा कि अपनी पत्नी उस कुत्ते को डंडा मार रही थी, अतः वह अपनी पत्नी को कुत्ते से बड़ा मानकर पत्नी की पूजा करने लगा। एक दिन किसी कारणवशात् उसे अपनी पत्नी पर क्रोध आ गया और क्रोध करते वक्त उसने देखा कि पत्नी उसके क्रोध से सहम गई है। उसे विचार आ गया कि : 'हाँ... पत्नी से तो मैं स्वयं ही उत्तम हूँ।' अतः वह अपनी ही उपासना करने लगा। वह ऐसा समझने लगा कि : 'सभी में स्वयं मैं ही हूँ।' अंत में, शुद्ध संकल्प से उसे आत्मबोध होने लगा और वह अपने को ही सबका साक्षी, सच्चिदानंदस्वरूप समझने लगा। ऐसा करते-करते वह परम शांति को उपलब्ध हो गया।''

१५ फरवरी को पूज्य स्वामीजी का आखिरी सत्संग सिंधी क्लब में हुआ। वह सत्संग हमेशा के लिए एक यादगार बन गया। उसमें पूज्य स्वामीजी ने समझाया : ''सत्य क्या है ? सत्य उसे कहते हैं जो तीनों कालों में- भूत, भविष्य एवं वर्त्तमान में स्थित हो। जो पहले था, अभी है और बाद में भी रहेगा वह सत्य । किसीका भी शरीर पहले नहीं था, अभी है और भविष्य में उसका नाश होनेवाला है। प्रत्येक वस्तु रूप, रंग, आकार बदलती रहती है। यह शरीर जन्म लेने के पूर्व न था। जन्म लेने के बाद वह बचपन, जवानी और वृद्धावस्था से गुजरता है। फिर मौत आती है... तो वह सत्य कैसे कहा जा सकता है ? अविवेक एवं अज्ञानता के कारण ही हम इस शरीर को सत्य समझते हैं। जब हमें सत्यबुद्धि प्राप्त होगी, जब हमारी बुद्धि शुद्ध होगी तब हम शरीर को सत्य एवं प्रिय नहीं समझेंगे।

जिसको शरीर मिला है उसे कोई-न-कोई दुःख अवश्य है। हमेशा यह समझने का प्रयत्न करना चाहिए कि मानव तन किसलिए मिला है ? मनुष्य योनि गयी तो फिर पता नहीं, कौन-सी योनि मिलेगी ? इसीलिए संत-महापुरुष कहते हैं कि अभी से ही जीवन्मुक्ति के लिए प्रयत्न करो। इसके लिए भगवान की भक्ति करो, स्मरण करो, चिंतन करो, ध्यान करो। विवेक-बुद्धि का उपयोग करो कि जो दिखता है वह अस्ति, भाति, प्रिय, नाम और रूपवाला है। नाम और रूप तो हमेशा बदलनेवाला है। असत् वस्तुओं पर से राग एवं ममता का त्याग करना है। भगवान का आश्रय लो । हमेशा सत्शास्त्रों एवं संतों का संग करो।''

जब १६ फरवरी की रात्रि को आठ बजे पूज्य स्वामीजी मुंबई के लिए हवाई जहाज में बैठे उस समय हवाई अड्डे पर सिंधी, गुजराती, सिक्ख, तमिल, चाइनीज वगैरह सभी लोग उनके दर्शन एवं विदाई के लिए एकत्रित हुए थे। उन लोगों ने जल्दी-जल्दी पुनः पधारने की प्रार्थना की एवं अश्रुभरी आँखों एवं भावभरे हृदय से पूज्य स्वामीजी को विदाई दी। (क्रमशः)

मनुष्य योनि गयी तो फिर पता नहीं, कौन-सी योनि मिलेगी ? इसीलिए संत-महापुरुष कहते हैं कि अभी से ही जीवन्मुक्ति के लिए प्रयत्न करो ।

''सत्य क्या है ? सत्य उसे कहते हैं जो तीनों कालों में- भूत, भविष्य एवं वर्त्तमान में स्थित हो । जो पहले था, अभी है और बाद में भी रहेगा वह सत्य है ।

त्राटक साधना

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

तप कई प्रकार के होते हैं। जैसे शारीरिक, मानसिक, वाचिक आदि। ऋषिगण कहते हैं कि मन की एकाग्रता सब तपों में श्रेष्ठ तप है।

जिसके पास एकाग्रता के तप का खजाना है, वह योगी रिद्धि-सिद्धि एवं आत्मसिद्धि दोनों को प्राप्त कर सकता है। जो भी अपने महान कर्मों के द्वारा समाज में प्रसिद्ध हुए हैं, उनके जीवन में भी जाने-अनजाने एकाग्रता की साधना हुई है। विज्ञान के बड़े-बड़े आविष्कार भी इस एकाग्रता के तप के ही फल हैं।

एकाग्रता की साधना को परिपक्व बनाने के लिए त्राटक एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। त्राटक का अर्थ है किसी निश्चित आसन पर बैठकर किसी निश्चित वस्तु को एकटक देखना।

जिसके पास एकाग्रता के तप का खजाना है, वह योगी रिद्धि-सिद्धि एवं आत्मसिद्धि दोनों को प्राप्त कर सकता है। जो भी अपने महान कर्मों के द्वारा समाज में प्रसिद्ध हुए हैं, उनके जीवन में भी जाने-अनजाने एकाग्रता की साधना हुई है।

त्राटक कई प्रकार के होते हैं। उनमें बिन्दु त्राटक, मूर्ति त्राटक एवं दीपज्योति त्राटक प्रमुख हैं। इनके अलावा प्रतिबिम्ब त्राटक, सूर्य त्राटक, तारा त्राटक, चन्द्र त्राटक आदि त्राटकों का वर्णन भी शास्त्रों में आता है। यहाँ पर प्रमुख तीन त्राटकों का ही विवरण दिया जा रहा है।

विधि : किसी भी प्रकार के त्राटक के लिए शांत स्थान होना आवश्यक है, ताकि त्राटक करनेवाले साधक की साधना में किसी प्रकार का विक्षेप न हो।

भूमि पर स्वच्छ, विद्युत-कुचालक आसन अथवा कम्बल बिछाकर उस पर सुखासन, पद्मासन अथवा सिद्धासन में कमर सीधी करके बैठ जायें। अब भूमि से अपने सिर तक की ऊँचाई माप लें। जिस वस्तु पर आप त्राटक कर रहे हों, उसे भी भूमि से उतनी ही ऊँचाई तथा स्वयं से भी उस वस्तु की उतनी ही दूरी रखें।

बिन्दु त्राटक

८ से १० इंच की लम्बाई व चौड़ाईवाले किसी स्वच्छ कागज पर लाल रंग से स्वस्तिक का चित्र बना लें। जिस बिन्दु पर स्वस्तिक की चारों भुजाएँ मिलती हैं, वहाँ पर सलाई से काले रंग का एक बिन्दु बना लें।

अब उस कागज को अपने साधना-कक्ष में उपरोक्त दूरी के अनुसार स्थापित कर दें। प्रतिदिन एक निश्चित समय व स्थान पर उस काले बिन्दु पर त्राटक करें। त्राटक करते समय आँखों की पुतलियाँ न हिलें तथा न ही पलकें गिरें, इस बात का ध्यान रखें।

प्रारम्भ में आँखों की पलकें गिरेंगी किन्तु फिर भी दृढ़ होकर अभ्यास करते रहें। जब तक आँखों से पानी न टपके, तब तक बिन्दु को एकटक निहारते रहें।

इस प्रकार प्रत्येक तीसरे-चौथे दिन त्राटक का समय बढ़ाते रहें। जितना-जितना समय अधिक बढ़ेगा, उतना ही अधिक लाभ होगा।

मूर्ति त्राटक

> *एकाग्रता की साधना को परिपक्व बनाने के लिए त्राटक एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है । त्राटक का अर्थ है किसी निश्चित आसन पर बैठकर किसी निश्चित वस्तु को एकटक देखना ।*

जिन किसी देवी-देवता अथवा संत-सद्गुरु में आपकी श्रद्धा हो, जिन्हें आप स्नेह करते हों, आदर करते हों उनकी मूर्ति अथवा फोटो को अपने साधना-कक्ष में ऊपर दिये गये विवरण के अनुसार स्थापित कर दें।

अब उनकी मूर्ति अथवा चित्र को चरणों से लेकर मस्तक तक श्रद्धापूर्वक निहारते रहें। फिर धीरे-धीरे अपनी दृष्टि को किसी एक अंग पर स्थित कर दें। जब निहारते-निहारते मन तथा दृष्टि एकाग्र हो जाय, तब आँखों को बंद करके दृष्टि को आज्ञाचक्र में एकाग्र करें।

इस प्रकार का नित्य अभ्यास करने से वह चित्र आँखें बन्द करने पर भी भीतर दिखने लगेगा। मन की वृत्तियों को एकाग्र करने में यह त्राटक अत्यन्त उपयोगी होता है तथा अपने इष्ट अथवा सद्गुरु के श्रीविग्रह के नित्य स्मरण से साधक की भक्ति भी पुष्ट होती है।

दीपज्योति त्राटक

अपने साधना-कक्ष में घी का दीया जलाकर उसे ऊपर लिखी दूरी पर रखकर उस पर त्राटक करें। घी का दीया न हो तो मोमबत्ती भी चल सकती है परन्तु घी का दीया हो तो अच्छा है।

इस प्रकार दीये की लौ को तब तक एकटक देखते रहें, जब तक कि आँखों से पानी न गिरने लगे। तत्पश्चात् आँखें बन्द करके भृकुटी (आज्ञाचक्र) में लौ का ध्यान करें।

त्राटक साधना से अनेक लाभ होते हैं। इससे मन एकाग्र होता है और एकाग्र मनयुक्त व्यक्ति चाहे किसी भी क्षेत्र में कार्यरत हो, उसका जीवन चमक उठता है। श्रेष्ठ मनुष्य इसका उपयोग आध्यात्मिक उन्नति के लिए ही करते हैं।

एकाग्र मन प्रसन्न रहता है, बुद्धि का विकास होता है तथा मनुष्य भीतर से निर्भीक हो जाता है। व्यक्ति का मन जितना एकाग्र होता है, समाज पर उसकी वाणी का, उसके स्वभाव का एवं उसके क्रिया-कलापों का उतना ही गहरा प्रभाव पड़ता है।

साधक का मन एकाग्र होने से उसे नित्य नवीन ईश्वरीय आनंद व सुख की अनुभूति होती है। साधक का मन जितना एकाग्र होता है, उसके मन में उठनेवाले संकल्पों (विचारों) का उतना ही अभाव हो जाता है। संकल्प का अभाव हो जाने से साधक की आध्यात्मिक यात्रा तीव्र गति से होने लगती है तथा उसमें सत्य संकल्प का बल आ जाता है। उसके मुख पर तेज एवं वाणी में भगवद्रस छलकने लगता है।

इस प्रकार त्राटक लौकिक एवं आध्यात्मिक दोनों क्षेत्रों के व्यक्तियों के लिए लाभकारी है।

– पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

अपकार के प्रति भी उपकार

भगवान श्रीराम जब १४ वर्ष के वनवास के पश्चात् अयोध्या लौटे और उनका राज्याभिषेक हो चुका, तब वे मंथरा के पास गये।

मंथरा तो प्रभु श्रीराम को देखकर काँप उठी। सोचने लगी : '१४ वर्ष का वनवास तथा दशरथनंदन, दशरथ परिवार व दशरथ के राज्य को मुसीबतों के मुँह में धकेलनेवाली मुझ पापिन को वे मृत्युदण्ड ही सुनायेंगे। रघुकुल को कलंकित करनेवाली मुझ पापिन की खैर नहीं। जहाँ रामराज्य की तैयारी हो रही थी, कौशल्या मंगल मना रही थीं, ब्राह्मण वैदिक मंत्रों का उच्चारण कर रहे थे और पूरा शहर उत्सव मना रहा था ऐसे उमंग और उत्साह के अवसर पर रंग में भंग करनेवाली मैं मंथरा ही थी। अब रामराज्य हो चुका है, अतः पहले तो मुझे ही दण्ड मिलेगा।'

करुणामय एवं अपना अपकार करनेवाले के प्रति भी उपकार करनेवाले हैं श्रीराम। शत्रु का भी कभी अहित नहीं चाहते हैं श्रीराम। ऐसे मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम के उपासक हैं भारतवासी।

इतने में तो प्रभु श्रीराम नजदीक आ गए और बोले : ''मंथरा ! तुम इस छोटी-सी झोंपड़ी में क्यों रहती हो ? चलो, राजमहल में चलो। हम तो तुम्हारी ही गोद में खेले हैं। क्या तुम हमको भूल गई ?''

मंथरा को विश्वास नहीं हुआ कि 'ये श्रीराम बोल रहे हैं ? यह मैं क्या देख रही हूँ ? जिन्हें मैंने वन भिजवाया, वे ही श्रीराम मुझे कह रहे हैं कि हम तुम्हारी ही गोद में खेले हैं ! चलो, राजमहल में चलो !'

ऐसे करुणामय एवं अपना अपकार करनेवाले के प्रति भी उपकार करनेवाले हैं श्रीराम। शत्रु का भी कभी अहित नहीं चाहते हैं श्रीराम। ऐसे मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम के उपासक हैं भारतवासी।

आप भी अपने शत्रु के प्रति मंगल वाणी बोलिए, आपका मंगल होगा।

अंगद जब रावण के पास जाता है तब भी रामजी उसे संकेत करते हैं कि :

काजु हमारु तासु हित होई।

कार्य हमारा हो और हित रावण का हो। ऐसी दृष्टि घर, कुटुम्ब, समाज व राजनीतिज्ञों में आ जाए तो पृथ्वी के तमाम ईश्वरीय अनुदान जो भारत को मिले हैं, उनसे सभी सुखी हो सकते हैं, सभी का हित हो सकता है।

*

काशीनरेश की न्यायप्रियता

'सत्कथा' ग्रंथ की यह कथा है :

काशीनरेश बड़े धर्मात्मा, सत्यप्रिय एवं न्यायप्रिय राजा थे। उनके पास कई विद्वान् पंडित आते-जाते रहते थे।

एक बार उनकी पटरानी को कार्तिक मास में गंगास्नान के लिए जाने की इच्छा हुई। पटरानी थी, अतः उसके लिए काफी बंदोबस्त किया गया

ताकि किसी की नजर उस पर न पड़े। गंगा-तट पर से बस्ती को हटा दिया गया एवं आस-पास जो झोंपड़े थे उनमें रहनेवाले गरीबों को भी रानी की आज्ञा से भगा दिया गया।

जब रानी स्नान करके बाहर आयी तो उसे ठंड लगने लगी। उसने एक दासी को हुक्म किया : ''सामने जो झोंपड़ियाँ हैं उनमें से एक झोंपड़ी जला दे ताकि मैं जरा हाथ सेंक लूँ।''

जो व्यक्ति सदैव सुखों में ही पला है, उसे दूसरों के दुःख का पता नहीं चलता। जो महलों में रहता है उसे झोंपड़ेवालों के आँसुओं का ख्याल नहीं रहता। जो रजाइयों में छिपा है उसे फटे कपड़ेवालों के दुःख का एहसास नहीं होता।

जिसे हुक्म किया गया था वह थी तो दासी, किन्तु उसे धर्म का ज्ञान था। वह बोली :

''महारानीजी ! आपको जितना अपना महल एवं राज-परिवार प्रिय है उतना ही इन गरीबों को अपना झोंपड़ा एवं कुटुम्ब प्यारा है। दूसरों की पीड़ा का ख्याल करके आप जरा सह लीजिए। आपको दिन में भी ठंड लग रही है तो वे बेचारे रात्रि में, इतनी ठंडी में कहाँ सोयेंगे ? इसका जरा ख्याल तो कीजिए !''

महारानी का नाम तो करुणा था, पर हृदय भरा था कठोरता से। उसने उस दासी को जोरदार तमाचा मारते हुए कहा : ''आयी बड़ी धर्मोपदेश देनेवाली। चल हट, नालायक कहीं की...''

उस बेचारी दासी को हटा दिया एवं जो चापलूसी करनेवाली दासियाँ थीं, उन्हें बुलाकर झोंपड़े को जलाने की आज्ञा कर दी।

''इस रानी ने जिनके झोंपड़े जलाये हैं, उन्हें पुनः यह रानी जब तक अपनी मेहनत-मजदूरी से अथवा भीख माँगकर बनवा न देगी, तब तक यह महल में आने के काबिल न रहेगी।''

दासियों ने जला दिया झोंपड़ा। सब झोंपड़े पास-पास ही थे। अतः एक झोंपड़े को जलाते ही हवा के कारण एक-एक करके सभी झोंपड़े जल उठे। महारानी झोंपड़ों की होली जलती देखकर बड़ी खुश हुई एवं राजमहल में वापस लौटी। इतने में प्रजा के कुछ समझदार लोग एवं जिनकी झोंपड़ियाँ जला दी गयी थीं, वे गरीब लोग आये राजा के पास शिकायत करने।

लोगों की शिकायत सुनकर राजा गये महल में एवं अपनी पटरानी से पूछा : ''लोग जो बात कह रहे हैं, क्या वह सच है ?''

महारानी : ''हाँ, मुझे ठण्ड लग रही थी। एक झोंपड़ी जलवायी तो सब जल गयीं। महा होली का नजारा देखने का आनंद आया।''

तब राजा ने सोचा : 'जो व्यक्ति सदैव सुखों में ही पला है, उसे दूसरों के दुःख का पता नहीं चलता। जो महलों में रहता है उसे झोंपड़ेवालों के आँसुओं का ख्याल नहीं रहता। जो रजाइयों में छिपा है उसे फटे कपड़ेवालों के दुःख का एहसास नहीं होता। मैं भी क्या ऐसी रानी की बातों में आ जाऊँ ? नहीं।'

उन्होंने अपनी दासियों को आदेश दिया :

''इस अभागिनी के राजसी वस्त्र-अलंकार तुरंत उतारकर झोंपड़ी में रहनेवाली स्त्री के फटे-चिथड़े वस्त्र पहना दो और राजदरबार में पेश करो।''

राजाज्ञा का उल्लंघन भला कौन-सी दासी करती ? तुरंत राजाज्ञा का पालन किया गया। राज-दरबार में रानी के आने पर राजा ने फरमान जारी किया :

''इस रानी ने जिनके झोंपड़े जलाये हैं, उन्हें पुनः यह रानी जब तक अपनी मेहनत-मजदूरी

से अथवा भीख माँगकर बनवा न देगी, तब तक यह महल में आने के काबिल न रहेगी।''

महारानी को राजाज्ञा का पालन करना ही पड़ा। आज्ञापालन के पश्चात् ही उसे महल में प्रवेश मिला।

ऐसा न्यायप्रिय राजा ही वास्तव में राज्य भोगने का अधिकारी होता है। दूसरों के दुःखों को समझकर उन्हें दूर करने की कोशिश करनेवाला ही वास्तव में मानव कहलाने का अधिकारी होता है। वह मानव ही क्या जिसमें मानवीय संवेदना का नाम नहीं ? वह मानवता कैसी जिसे दूसरों के दुःख-दर्द का एहसास नहीं ?

वेश का गौरव

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जिनका संशय पूर्ण रूप से मिट चुका है, जो सोहं स्वरूप में ठीक से जाग चुके हैं, उन्हें हम फकीर कहते हैं। फकीर का सान्निध्य तो गहरा असर करता ही है, लेकिन कभी-कभी साधु का वेश भी बड़ा चमत्कार कर देता है।

डाकुओं का एक सरदार साधु का वेश बनाकर रहता था एवं तसबी साथ में रखता था किन्तु धंधा डाका डालने का करता था। उसके साथी डाका डालने जाते थे।

एक बार व्यापारियों की एक टोली उसी रास्ते से गुजरी जहाँ डाकू रहते थे। डाकुओं ने सोचा कि आज तो घर बैठे ही शिकार मिल गया। डाकुओं ने घेरा डालकर उन्हें लूटना चालू कर दिया।

डाकुओं का सरदार उस वक्त अपने तंबू में बैठा तसबी घुमा रहा था। इतने में एक व्यापारी छटककर उस टोली से अपनी अशर्फियों की थैली लेकर तंबू की ओर भागा एवं उस साधु वेशधारी डाकू के पास जाकर बोला :

''महात्मन्! कृपया यह थैली ले लीजिए। यहाँ डाकुओं ने घेरा डाल दिया है और बड़ी दुष्टता से व्यापारियों को लूट रहे हैं। बाबाजी ! थोड़ी देर के लिए आप यह अशर्फियाँ सँभाल लीजिए। डाकू चले जाएँगे तो फिर मैं कभी-भी आकर ले जाऊँगा।''

साधु वेशधारी डाकू ने संकेत किया : 'कोने में रख दे।' सेठ ने थैली कोने में रख दी। जब डाका डल चुका तब सारे डाकू उसी तंबू में अपने माल के बँटवारे के लिए आये। संयोगवशात् वह सेठ भी उसी समय आया। वहाँ डाकुओं को देखकर वह चौंक उठा : 'अरे ! जिन्हें मैं महात्मा मान रहा था वही डाकुओं का सरदार है !'

"संत का वेश परमात्मा की याद दिलानेवाला वेश है। इस वेश को कहीं कलंक न लग जाये, इसलिए मैंने उसे उसकी थैली लौटा दी।"

सेठ के मुख पर हवाइयाँ उड़ने लगीं, पैरों तले जमीन खिसकने लगी एवं वह थर-थर काँपने लगा।

इतनी देर में सरदार की नजर सेठ पर पड़ी। सरदार कुछ बोले, उसके पहले ही सेठ ने वहाँ से निकल जाना उचित समझा एवं पीठ देकर चलने लगा।

सरदार ने पूछा : "क्यों सेठजी ! किसलिए आये थे ?"

सेठ : "बस, गलती से आ गया हूँ। आया तो था थैली लेने, किन्तु अब जान बच जाये तो भी गनीमत है। अब मुझे जाने दो। आपको महात्मा समझकर मैंने थैली रखी थी। अब भले वह थैली आपके पास रहे। मुझे जाने दो।"

महात्मा के वेश में छिपे हुए सरदार ने कहा :

"आपकी अमानत वहीं पड़ी है। आपको हम या हमारे साथी छुएँगे तक नहीं। सेठजी ! अपनी अमानत ले जाइए।"

अंधे को क्या चाहिए ? दो आँखें। सेठ की तो जान भी बच गयी एवं थैली भी वापस मिल गयी। सेठ थैली लेकर चला गया।

तब अन्य डाकुओं ने कहा : "यह आपने क्या किया ? घर आये हुए मुर्गे को छोड़ दिया ? अगर आप ही ऐसा करेंगे तो हम सब क्या करेंगे ?"

तब सरदार ने कहा :

"साथियों ! इस सेठ ने मुझे महात्मा समझकर थैली रखी थी क्योंकि मैं संत का वेश पहनकर रहता हूँ। संत का वेश परमात्मा की याद दिलानेवाला वेश है। इस वेश को कहीं कलंक न लग जाये, इसलिए मैंने उसे उसकी थैली लौटा दी।"

बाद में वह डाकू सचमुच ही एक महान् संत बन गया।

कैसी दिव्य महिमा है वेश की !

नर्स को देखकर अस्पताल की याद आती है, खाकी वर्दी देखकर थाने की याद आती है, काले कोटवाले वकीलों को देखकर न्यायालय की याद आती है और संत को देखकर परमात्मा की याद आती है।

केवल संत वेश में होने पर भी जब एक डाकू थोड़ी देर के लिए ही सही उसकी मर्यादा का पालन करता है तो जिन्होंने परमात्म-प्राप्ति करने के लिए साधुवेश धारण किया है ऐसे साधकों को तो सदा उसकी मर्यादा की रक्षा में सजग एवं सावधान रहना ही चाहिए।

*

अद्वैतनिष्ठा का अनुभव किया

एक विद्वान् पंडित थे। सारी उम्र उन्होंने इसी चिंतन में बितायी थी कि भगवान सर्वत्र हैं... सब रूपों में वे ही हैं। वे लोगों को भी इसी बात का उपदेश दिया करते थे।

नर्स को देखकर अस्पताल की याद आती है, खाकी वर्दी देखकर थाने की याद आती है, काले कोटवाले वकीलों को देखकर न्यायालय की याद आती है और संत को देखकर परमात्मा की याद आती है।

एक बार वे खूब बीमार पड़ गये। हकीमों ने कहा : "अब एक बूँद पानी भी पंडितजी को यदि पिलाया तो उनको अपने जीवन से हाथ धोना पड़ेगा।"

थोड़ी देर बाद पंडितजी को खूब प्यास लगी। उन्होंने कुटुम्बियों से कहा :

''हकीमों ने तो एक बूँद तक जल लेने से इन्कार किया है किन्तु अब रहा भी नहीं जाता है। अतः तरबूज लाओ और रस निकालो। फिर पवित्र ब्राह्मणों एवं भक्तों को बुलाकर उन्हें पिलाओ। सारा जीवन मैंने जो सुनाया है, आज उसका अनुभव करना है।''

पंडितजी के कथनानुसार व्यवस्था की गयी। जैसे-जैसे लोग रस पीते गये, पंडितजी को तृप्ति का एहसास होता गया।

*

लगी ग्वाले की बात... हुआ बेड़ा पार...

जूनागढ़ के राजा खेंगार खरगोश का शिकार करके लौट रहे थे। मार्ग में गुमराह हो गये। एक ग्वाला बंसी बजा रहा था। राजा ने उससे पूछा :

''यह मार्ग कहाँ जाता है ?''

ग्वाला : ''मार्ग दो ही हैं- एक स्वर्ग की ओर, दूसरा नरक की ओर।''

राजा : ''यह तू क्या बोलता है ?''

ग्वाला : ''ऐसी ही बात है। जीवों की हिंसा करके, खरगोश को मारकर खाना- यह नरक का मार्ग है और जीवों पर दया करके, गुरु के द्वार पर पहुँचना- यह स्वर्ग का मार्ग है। आपको कौन-सा मार्ग चाहिए राजा खेंगार !''

राजा ने खरगोशों को वहीं खोल दिया और कहा : ''जूनागढ़ की गिरि-कंदरा में कोई साधु-संत हो तो बता भाई ! अब मैं वहीं जाऊँगा।''

लग जाये तो एक ग्वाले की बात भी लग जाये और बेड़ा पार हो जाये। नहीं तो कथा सुनते रहो और थोड़ा-थोड़ा पाप धुलता रहे। फिर भी संतों का संग व्यर्थ नहीं जाता। थोड़ा-थोड़ा पाप धुलते-धुलते अंत में भगवान का रंग लगने ही लगता है।

*

कर्माबाई की खिचड़ी

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

सर्वान्तर्यामी, घट-घटवासी भगवान न तो धन-ऐश्वर्य से प्रसन्न होते हैं और न ही पूजा के लंबे-चौड़े विधानों से। वे तो बस, एकमात्र प्रेम से ही संतुष्ट होते हैं एवं प्रेम के वशीभूत होकर नेम (नियम) की भी परवाह नहीं करते। कोई उनका होकर उन्हें पुकारे तो दौड़े चले आते हैं।

कर्माबाई नामक एक ऐसी ही भक्तिमती नारी थीं जिनकी पुकार को सुनकर भगवान प्रतिदिन उनकी खिचड़ी खाने दौड़े चले आते थे। भगवान यह नहीं देखते कि भक्त ने खीर-पूरी-पकवान तैयार किये हैं या एकदम सीधा-सादा, रूखा-सूखा अन्न।

कर्माबाई श्रीपुरुषोत्तमपुरी (जगन्नाथपुरी) में निवास करती थीं। वे भगवान का वात्सल्य-भाव से चिंतन करती थीं एवं प्रतिदिन नियमपूर्वक प्रातःकाल स्नानादि किये बिना ही खिचड़ी तैयार करतीं और भगवान को अर्पित करती थीं। प्रेम के वश में रहनेवाले श्रीजगन्नाथजी भी प्रतिदिन सुंदर-सलोने बालक के वेश में आते और कर्माबाई की गोद में बैठकर खिचड़ी खा जाते। कर्माबाई भी सदैव चिन्तित रहा करती थीं कि बालक के भोजन में कभी-भी विलंब न हो जाये। इसी कारण

वे किसी भी विधि-विधान के पचड़े में न पड़कर अत्यंत प्रेम से सबेरे ही खिचड़ी तैयार कर लेती थीं।

एक दिन की बात है। कर्माबाई के पास एक साधु आए। उन्होंने कर्माबाई को अपवित्रता के साथ खिचड़ी तैयार करके भगवान को अर्पण करते हुए देखा। घबराकर उन्होंने कर्माबाई को पवित्रता के लिए स्नानादि की विधियाँ बता दीं।

सर्वान्तर्यामी, घट-घटवासी भगवान न तो धन-ऐश्वर्य से प्रसन्न होते हैं और न ही पूजा के लंबे-चौड़े विधानों से। वे तो बस, एकमात्र प्रेम से ही संतुष्ट होते हैं एवं प्रेम के वशीभूत होकर नेम (नियम) की भी परवाह नहीं करते।

भक्तिमती कर्माबाई ने दूसरे दिन वैसा ही किया। किन्तु खिचड़ी तैयार करने में उन्हें देर हो गयी। उस समय उनका हृदय रो उठा : 'मेरा प्यारा श्यामसुंदर भूख से छटपटा रहा होगा।'

कर्माबाई ने दुःखी मन से श्यामसुंदर को खिचड़ी खिलायी। इसी समय मंदिर में अनेकानेक घृतमय पक्वान्न निवेदित करने के लिए पुजारी ने प्रभु का आवाहन किया। प्रभु जूठे मुँह ही वहाँ चले गये। पुजारी चकित हो गया। उसने देखा कि भगवान के मुखारविंद में खिचड़ी लगी है! पुजारी भी भक्त था। उसका हृदय क्रन्दन करने लगा। उसने अत्यंत कातर होकर प्रभु से असली बात जानने की प्रार्थना की।

प्रेम में अद्भुत शक्ति है। जो काम कल-बल-छल से नहीं हो सकता, वह प्रेम से संभव है। प्रेम प्रेमास्पद को भी अपने वशीभूत कर देता है। भगवान के होकर भगवान से प्रेम करो तो उसके मिलने में जरा-भी देर नहीं है।

तब उसे उत्तर मिला : ''नित्यप्रति प्रातःकाल मैं कर्माबाई के पास खिचड़ी खाने जाता हूँ। उनकी खिचड़ी मुझे बड़ी प्रिय और मधुर लगती है। पर कल एक साधु ने जाकर उन्हें स्नानादि की विधियाँ बता दीं, इसलिए विलंब के कारण मुझे क्षुधा का कष्ट तो हुआ ही, साथ ही शीघ्रता में जूठे मुँह आना भी पड़ा।''

भगवान की आज्ञानुसार पुजारी ने उस साधु को ढूँढ़कर प्रभु की सारी बातें सुना दीं। साधु चकित हो उठा एवं घबराकर कर्माबाई के पास जाकर बोला :

''आप पूर्व की ही तरह प्रतिदिन सबेरे ही खिचड़ी बनाकर प्रभु को निवेदन कर दिया करें। आपके लिए किसी नियम की आवश्यकता नहीं है।''

कर्माबाई पुनः पहले की ही तरह प्रतिदिन सबेरे भगवान को खिचड़ी खिलाने लगीं।

कर्माबाई समय पाकर परमात्मा के पवित्र और आनंदमय धाम में चली गयीं, परन्तु उनके प्रेम की गाथा आज भी विद्यमान है। श्रीजगन्नाथजी के मंदिर में आज भी प्रतिदिन प्रातःकाल खिचड़ी का भोग लगाया जाता है।

प्रेम में अद्भुत शक्ति है। जो काम कल-बल-छल से नहीं हो सकता, वह प्रेम से संभव है। प्रेम प्रेमास्पद को भी अपने वशीभूत कर देता है किन्तु शर्त इतनी ही है कि प्रेम केवल प्रेम के लिए ही किया जाये, किसी स्वार्थ के लिए नहीं। भगवान के होकर भगवान से प्रेम करो तो उसके मिलने में जरा-भी देर नहीं है।

*

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ७७ वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया मार्च तक अपना नया पता भिजवा दें।
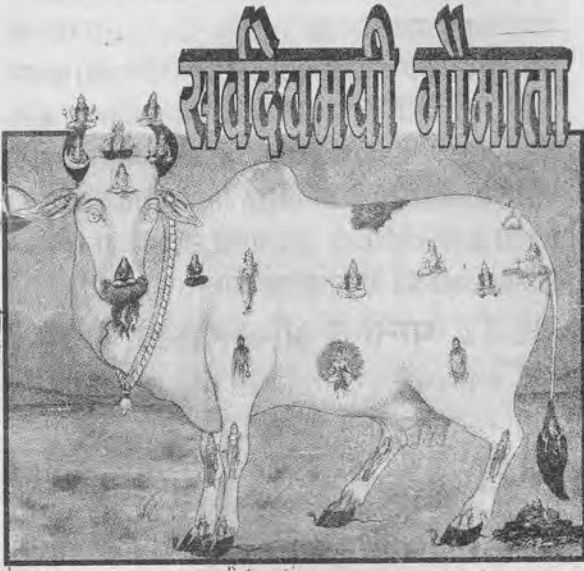
गौमाता : ऊर्जा का अक्षय स्रोत

[गतांक का शेष]

गोदुग्ध का आर्थिक विश्लेषण करने पर छः रूपये प्रति किलोग्राम के हिसाब से लगभग १८००० करोड़ रूपये की आमदनी प्रतिवर्ष मात्र गोदुग्ध से होती है । यद्यपि वसांश कम होने के कारण गाय के दूध की कीमत भैंस के दूध की अपेक्षा कम मिलती है परंतु गोदुग्ध के जो गुण हैं उनके विषय में पूर्ण जानकारी न होने के कारण ऐसा हो रहा है। गाय का दूध तो भैंस तथा बकरी की तुलना में कई गुना श्रेष्ठ है। अतः उसके महत्त्व को उजागर करने की आवश्यकता है । ऊर्जा के साथ-साथ जो पौष्टिक तत्त्व हमें गोदुग्ध से मिलते हैं, वे अन्य किसी पदार्थ से नहीं मिलते हैं।

६. वनस्पतियों के लिए ऊर्जा : गाय से प्रतिवर्ष लगभग ११,५०० लाख टन गोबर की खाद मिलती है जो हमारी भूमि को पोषित करके तरह-तरह के अनाज, पेड़-पौधों, वनस्पतियों को उगाने तथा फलने-फूलने में मदद करता है। यदि नेडेप विधि द्वारा खाद बनाया जाए तो एक गाय के गोबर से ८०-१०० टन खाद प्रतिवर्ष बनाया जा सकता है। इस प्रकार देश में विद्यमान संपूर्ण गायों तथा गौवंश के गोबर से पूरी जमीन को पोषित किया जा सकता है । आज देश में लगभग १३ लाख ८ हजार टन रासायनिक खादों की खपत होती है, जिस पर रूपये ९००० करोड़ से अधिक का तो अनुदान दिया जाता है । यदि इसके बदले बायोगैस तथा कम्पोस्ट खाद पर बल दिया जाए तो अच्छी खाद तो मिलेगी ही, गैस भी मिलेगी, विदेशी मुद्रा की बचत होगी, प्रदूषण से मुक्ति मिलेगी तथा भूमि का सुधार होगा।

उक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि गौवंश विभिन्न रूपों में मनुष्यों को, जीव-जंतुओं को तथा वनस्पतियों को ऊर्जा देकर पोषित करता है। उसकी ऊर्जा पूरे भारत में फैली है। यह सस्ती है, सुलभ है, प्रदूषणरहित है तथा निरन्तर प्राप्य है। ऊर्जा के ऐसे अक्षय स्रोत की हमें हर संभव प्रयास करके रक्षा करनी चाहिए।

गौमाता : दुःख-दारिद्र्यहारिणी

हमारे धार्मिक ग्रंथों तथा वेदों के अनुसार लक्ष्मी का निवास गौमाता के गोबर में माना जाता है। स्कंद पुराण के अनुसार :

लक्ष्मीश्च गोमये नित्यं पवित्रा सर्वमंगला ।
गोमयालेपनं तस्मात् कर्त्तव्यं पाण्डुनंदन ॥

'गोबर में परम पवित्र सर्व मंगलमयी लक्ष्मीजी नित्य निवास करती हैं। इसलिए गोबर से लेपन करना चाहिए।' (स्कन्द० आ० रेवा० ८३.१०८)

ऋग्वेद के अनुसार :

समिन्द्र राया समिष रभेमहि सर्वजेभिः पुरुश्चेन्द्रैभिद्युभिः ।
सं देव्या प्रमत्या वीर शुष्मया गो अग्रयाख्वावल्या रभैमहि ॥

वेद भगवान का निर्देश है कि 'यदि किसीको इस माया-राज्य में सब प्रकार का वैभव प्राप्त करना है तो गौमाता की प्रमुख रूप से सेवा करे।

(ऋग्वेद : १. ५३१५)

(क्रमशः)

–वैद्यराज अमृतभाई

नेत्र-सुरक्षा

आँखों को सँभालो... चश्मा छोडो...

आँख हमारे शरीर का सबसे अधिक अनमोल और नाजुक अंग है । आँखों की चमक-दमक उत्तम स्वास्थ्य का परिचायक है। लेकिन आज कल छोटी-छोटी आयु के बच्चों को चश्मे लगाते देखकर मन में बहुत दुःख होता है । आज हम ३ से ४ वर्ष की आयुवाले बच्चों को भी चश्मा लगाये हुए देख सकते हैं।

चश्मे का प्रयोग आँख के रोगों का वास्तविक उपचार नहीं है बल्कि इसके प्रयोग से आँखों का स्वाभाविक सौन्दर्य और शक्ति क्षीण हो जाती है । जब चश्मे का प्रयोग करने की आदत हो जाती है तो मनुष्य सदा के लिए इसका गुलाम बन जाता है । यदि आप अपने आहार-विहार को अपने शरीर, प्रकृति और ऋतु के अनुकूल रखो तथा आँखों को रोगों से बचाने के इन सरल और सुरक्षित उपायों का नियम से सावधानीपूर्वक पालन करो तो आपकी आँखें जीवन भर स्वस्थ रह सकती हैं और आप चश्मे से भी छुटकारा पा सकते हो ।

नेत्र-स्नान

आँखों को स्वच्छ, शीतल और निरोगी रखने के लिए प्रातः बिस्तर से उठकर, भोजन के बाद, दिन में कई बार और सोते समय मुँह में पानी भरकर आँखों पर स्वच्छ, शीतल जल के छींटे मारो। इससे आँखों की ज्योति बढ़ती है । इसके अलावा अगर पढ़ते समय अथवा आँखों का अन्य कोई बारीक कार्य करते समय आँखों में जरा भी थकान महसूस हो तो इसी विधि से ठंडे पानी से आँखों को धो डालो । आँखों के लिए यह रामबाण औषध है ।

पानी में आँखें खोलो

स्नान करते समय किसी चौड़े मुँहवाले बर्तन में साफ-ताजा पानी लेकर, उसमें आँखों को बार-बार डुबोकर खोलो और बंद करो। यह विधि अगर किसी नदी या सरोवर के शुद्ध जल में डुबकी लगाकर की जाय तो अपेक्षाकृत अधिक फायदेमंद होती है । इस विधि से नेत्र-स्नान करने से कई प्रकार के नेत्र-रोग दूर हो जाते हैं ।

कभी-कभी त्रिफला के चूर्ण को पानी में भिगो दो । १२ घंटे बाद उस पानी को छानकर उससे आँखें धोने से भी आँखों के रोग मिट जाते हैं ।

विश्राम

हम रात-दिन आँखों का प्रयोग करते रहते हैं लेकिन उनको आराम देने की ओर कभी ध्यान नहीं देते हैं। आँखों को आराम देने के लिए थोड़े-थोड़े समय के अन्तराल के बाद आँखों को बंद करके, मन को शांत करके, अपनी दोनों हथेलियों से आँखों को इस प्रकार ढँक लो कि तनिक भी प्रकाश और हथेलियों का दबाव आपकी पलकों पर न पड़े ।

साथ ही अंधकार का आप ऐसा ध्यान करो, मानो आप अंधेरे कमरे में बैठे हुए हैं। इससे आँखों को विश्राम मिलता है और मन भी शांत होता है। रोगी-निरोगी, बच्चे, युवान, वृद्ध सभी को यह विधि दिन में कई बार करना चाहिए ।

आँखों को गतिशील रखो

'गति ही जीवन है' इस सिद्धान्त के अनुसार हर अंग को स्वस्थ और क्रियाशील बनाए रखने

के लिए उसमें हरकत होते रहना अत्यन्त आवश्यक है। पलकें झपकाना आँखों की सामान्य गति है । बच्चों की आँखों में सहज रूप से ही निरन्तर यह गति होती रहती है। पलकें झपकाकर देखने से आँखों की क्रिया और सफाई सहज में हो जाती है। आँखें फाड़-फाड़कर देखने की आदत आँखों का गलत प्रयोग है । इससे आँखों में थकान और जड़ता आ जाती है। इसका दुष्परिणाम यह होता है कि हमें अच्छी तरह देखने के लिए नकली आँखें अर्थात् चश्मा लगाने की नौबत आ जाती है । चश्मा से बचने के लिए हमें बार-बार पलकों को झपकाने की आदत को अपनाना चाहिए । पलकें झपकाते रहना आँखों की रक्षा का प्राकृतिक उपाय है ।

सूर्य की किरणों का सेवन

प्रातः सूर्योदय के समय पूर्व दिशा की ओर मुख करते हुए बैठकर सूर्योदय के कुछ समय बाद की सफेद किरणें बंद पलकों पर लेनी चाहिए । प्रतिदिन प्रातः और अगर समय मिले तो शाम को भी सूर्य के सामने आँखें बंद करके आराम से इस तरह बैठो कि सूर्य की किरणें बंद पलकों पर सीधी पड़ें। बैठे-बैठे, धीरे-धीरे गर्दन को क्रमशः दायीं तथा बायीं ओर कंधों की सीध में और आगे-पीछे तथा दायीं और बायीं ओर से चक्राकार गोलाई में घुमाओ। दस मिनट ऐसा करके आँखों को बंद कर दोनों हथेलियों से ढँक दो जिससे ऐसा प्रतीत हो, मानो अंधेरा छा गया है। अन्त में, धीरे-धीरे आँखों को खोलकर उन पर ठंडे पानी के छींटे मारो। यह प्रयोग आँखों के लिए अत्यन्त लाभदायक है और चश्मा छुड़ाने का सामर्थ्य रखता है ।

आँखों की सामान्य कसरतें

१. हर रोज प्रातः सायं एक-एक मिनट तक पलकों को तेजी से खोलने तथा बंद करने का अभ्यास करो।

२. आँखों को जोर से बंद करो और दस सेकंड बाद तुरंत खोल दो। यह विधि चार-पाँच बार करो।

३. आँखों को खोलने-बंद करने की कसरत जोर देकर क्रमशः करो अर्थात् जब एक आँख खुली हो, उस समय दूसरी आँख बंद रखो। आधा मिनट तक ऐसा करना उपयुक्त है ।

४. हाथों की अंगुलियों को नाक की ओर से कानों की ओर ले जाते हुए उनके द्वारा नेत्रों के पर्दों पर हल्की-हल्की मालिश करो । पलकों से अंगुलियाँ हटाते ही पलकें खोल दो और फिर पलकों पर अंगुलियाँ लाते समय पलकों को बंद कर दो। यह प्रक्रिया आँखों की नस-नाड़ियों का तनाव दूर करने में सक्षम है।

सही ढंग से पढ़ो और देखो

विद्यार्थियों को इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि वे आँखों को चौंधिया देनेवाले अत्यधिक तीव्र प्रकाश में न देखें। सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण के समय सूर्य और चन्द्रमा को न देखें। कम प्रकाश में अथवा लेटे-लेटे पढ़ना भी आँखों के लिए बहुत हानिकारक है। आज कल के विद्यार्थी आम तौर पर इसी पद्धति को अपनाते हैं। बहुत कम रोशनी में अथवा अत्यधिक रोशनी में पढ़ने-लिखने और नेत्रों के अन्य कार्य करने से नेत्रों पर जोर पड़ता है । इससे आँखें कमजोर हो जाती हैं और कम आयु में ही चश्मा लग जाता है। पढ़ते समय आँख और किताब के बीच १२ इंच की दूरी रखनी चाहिए।

उचित आहार-विहार

आपकी आँखों का स्वास्थ्य आपके आहार पर भी निर्भर करता है। कब्ज शरीर के कई प्रकार के रोगों की जड़ है। इसलिए पेट हमेशा साफ रखो और कब्ज न होने दो । इससे भी आप अपनी आँखों की रक्षा कर सकते हैं। इसके लिए हमेशा सात्त्विक और सुपाच्य भोजन लेना चाहिए। अधिक नमक, मिर्च, मसाले, खटाई और तले हुए पदार्थों से जहाँ तक हो सके बचने का प्रयत्न करना चाहिए। आँखों को निरोगी रखने के लिए सलाद, हरी सब्जियाँ अधिक मात्रा में खानी चाहिए।

योग से रोगमुक्ति : योगासन भी नेत्र-रोगों

को दूर करने में सहायक सिद्ध होते हैं। सर्वांगासन नेत्र-विकारों को दूर करने का और नेत्र-ज्योति बढ़ाने का सर्वोत्तम आसन है।

नेत्र-रक्षा के उपाय

१. गर्मी और धूप से गर्म शरीर पर एकदम से ठण्डा पानी न डालो। पहले पसीना सुखाकर शरीर को ठण्डा कर लो। सिर पर गर्म पानी न डालो और न ज्यादा गर्म पानी से चेहरा धोया करो।

२. बहुत दूर के और बहुत चमकीले पदार्थों को घूरकर न देखा करो।

३. नींद का समय हो जाए और आँखें भारी होने लगें, तब जागना उचित नहीं।

४. सूर्योदय के बाद सोये रहने, दिन में सोने और रात में देर तक जागने से आँखों पर तनाव पड़ता है और धीरे-धीरे आँखें बेनूर, रूखी और तीखी होने लगती हैं।

५. धूल, धुँआँ और तेज रोशनी से आँखों को बचाना चाहिए।

६. अधिक खट्टे, नमकीन और लाल मिर्चवाले पदार्थों का अधिक सेवन नहीं करना चाहिए। मल-मूत्र और अधोवायु के वेग को रोकने, ज्यादा देर तक रोने और तेज रफ्तार की सवारी करने से आँखों पर सीधी हवा लगने से आँखें कमजोर होती हैं। इन सभी कारणों से बचना चाहिए।

७. मस्तिष्क को चोट से बचाओ। शोक-सन्ताप व चिन्ता से बचो। ऋतुचर्या के विपरीत आचरण न करो और आँखों के प्रति लापरवाह न रहो। आँखों से देर तक काम लेने पर सिर में भारीपन का अनुभव हो या दर्द होने लगे तो फौरन अपनी आँखों की जाँच कराओ।

८. सोते समय घर पर तैयार किया गया काजल आँखों में लगाना चाहिए। सुबह उठकर गीले कपड़े से काजल पोंछकर साफ कर दो।

नेत्रज्योतिवर्धक घरेलू नुस्खे

१. आँखों की ज्योति बढ़ाने के साथ ही शरीर को पुष्ट और सुडौल बनानेवाला एक अनुभूत उत्तम प्रयोग प्रस्तुत है : आधा चम्मच ताजा मक्खन, आधा चम्मच पीसी मिश्री और ५ काला मिर्च मिलाकर चाट लो। इसके बाद कच्चे नारियल की गिरी के २-३ टुकड़े खाकर ऊपर से थोड़ी सौंफ खूब चबा-चबाकर खा लो। यह प्रयोग प्रातः खाली पेट २-३ माह तक करो।

२. प्रातःकाल सूर्योदय से पहले उठकर नित्य कर्मों से निवृत्त होकर भ्रमण के लिए नियमित रूप से जाना आँखों के लिए बहुत हितकारी होता है। जब सूर्योदय हो रहा हो तब कहीं हरी घास हो तो उस पर १५-२० मिनट तक नंगे पैर टहलना चाहिए। घास पर रात भर गिरनेवाली ओस की नमी रहती है। नंगे पैर इस पर टहलने से आँखों को तरावट मिलती है और शरीर की अतिरिक्त रूप से बढ़ी हुई उष्णता में कमी आती है। यह उपाय आँखों की ज्योति की रक्षा करने के अलावा शरीर को भी लाभ पहुँचाता है।

३. एक ग़िलास ताजे और साफ पानी में नीबू का ५-६ बूँद रस टपका दो और इस पानी को साफ कपड़े से छान लो। केमिस्ट की दुकान से 'आई वाशिंग ग्लास' ले आओ। इससे दिन में एक बार आँख को धोना चाहिए। धोने के बाद ठंडे पानी की पट्टी आँखों पर रखकर ५-१० मिनट लेटना चाहिए। इस प्रयोग से आँखों की ज्योति बढ़ती है और चश्मे का नम्बर कम होता है।

अगर आप आँखों को स्वस्थ रखने की इन छोटी-छोटी बातों पर ध्यान दो और नियमित रूप से सावधानीपूर्वक इन प्रयोगों को करते रहो तो आप लम्बे समय तक अपनी आँखों को विभिन्न रोगों से बचाकर उन्हें स्वस्थ, सुन्दर और आकर्षक बनाये रख सकते हैं।

*

सप्तधातुवर्धक वटी

उपयोग : यह वटी बल-वीर्यवर्धक, टूटी हड्डी को शीघ्र ही जोड़ने में सहायक और स्नायु संस्थान को सक्षम बनाये रखनेवाली है। धातुस्राव, अशक्ति एवं कृशता में उपयोगी है। शरीर की सप्तधातुओं का संतुलन बनाये रखने में सहायभूत है।

विधि : २-३ ग्राम बूटी एक गिलास पानी में रात को भिगो दें। सुबह उबालकर आधा कर लें। उस ढंग से उबाली हुई बूटी एक बर्तन से दूसरे बर्तन में लें ताकि कदाचित् मिट्टी के कण हों तो नीचे रह जाएँ। भीगी बूटी को दूध के साथ भी उबालकर ले सकते हैं अथवा इसका पानी शीरा बनाकर खा सकते हैं। सब्जी आदि में भी उपयोग कर सकते हैं। जिनकी हड्डियाँ कमजोर हैं, फ्रैक्चर आदि हैं उनको गेहूँ का शीरा बनाकर उसमें यह बूटी मिलाकर लेना अत्यंत लाभकारी है। सप्तधातुवर्धक इस औषधि में कोई दोष नहीं, कोई 'साइड इफेक्ट' नहीं। शरीर को सुदृढ़ बनाने की इच्छावाले रोगी-निरोगी सभी इसका उपयोग कर सकते हैं।

* कृपया ध्यान दें *

सिंधी पत्रिका 'दरवेश दर्शन' का नया सदस्यता शुल्क इस प्रकार है : देश में वार्षिक Rs. 20. त्रिवार्षिक Rs. 50. आजीवन Rs. 200. विदेश में वार्षिक US$ 12. त्रिवार्षिक US$ 30. आजीवन US$ 120.

देश-विदेशों में टी.वी. चैनलों पर पू. बापू के सत्संग-कार्यक्रम

SONY टी.वी. चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' सत्संग-कार्यक्रम सुबह ७-३०. लंदन के समयानुसार सुबह ७-३० यूरोप एवं अफ्रीका में। न्यूयॉर्क के समयानुसार सुबह ७-३० अमेरिका एवं केनेडा में। तदुपरांत, अमेरिका में T. V. Asia चैनल पर इस्टर्न टाईम के मुताबिक सोमवार, बुधवार, शनिवार को सुबह ९ बजे तथा Asian-American Broadcasting Company पर इस्टर्न टाईम के मुताबिक हररोज सुबह ६ बजे एवं सुबह १० बजे। भारत के भाई-बहन विदेशों में रहनेवाले अपने सगे-संबंधी, परिचितों-मित्रों को खबर कर सकते हैं।

आरती

आरती करूँ सद्भाव सहित मैं साँई बापू की।
कलियुग में अवतरे रक्षा करने भक्तों की॥

चैत वदी छठ को जन्मे, बेराणी तर सिंधु।
अयोध्या में दशरथ के घर, ज्यों लक्ष्मण बंधु॥

ध्यान-धारणा, हरिभक्ति लागे प्यारी बचपन से।
मात-पिता की सेवा करते, आशिष मिले उनसे॥

गृहस्थ जीवन स्वीकारा, माता की मान आज्ञा।
गुरुखोज में निकले, छोड़ घर लक्ष्मी कांता॥

नैनीताल जंगल में मिले गुरु साँई लीलाशाह बापू।
अनन्य भाव से शरण गही तब प्रसन्न हो साधू॥

प्रभुदर्शन की इच्छा खातिर कठोर तप कीन्हा।
आश्विन शुक्ल दूज को प्रभु ने दर्शन दीन्हा॥

आत्मसाक्षात्कार से कहलाये, ब्रह्मज्ञानी स्वामी।
हरिभक्ति का मार्ग दिखाया मन भक्ति भर दी॥

भागवत धर्म का ज्ञान दे, जन जागृति करते रहते।
ज्ञान भक्ति वैराग्य कर्म की त्रिवेणी में नहाते॥

'नामदान' दे भक्तों को सन्मार्ग दिखाते हैं।
नाम प्रताप से भवसागर के पार हो जाते हैं॥

सत्संग ज्ञान की ज्योति जलाई ज्ञान प्रकाश फैला।
मुख से सत्संग गंगा फैली मन होता उजला॥

लाख-करोड़ों भक्तजनों को सद्गुरु मिले।
मोह पाश को तोड़े हमारे, हरिपद भक्ति मिले॥

सत्संग करते भक्तों संग, मन ब्रह्मानंद रमता।
गुरुकृपा से चमत्कार हो, नयनों से दिखता॥

कर जोड़े हैं अपने सद्गुरु के चरणों में।
हरिदर्शन की इच्छा पूरी, इसी जन्म कर दें॥

- श्रीमती पंकजा शुक्ला
विभागाध्यक्ष, गृहविज्ञान,
गीतांजलि कन्या महाविद्यालय, भोपाल।

पुण्यार्जन का सुअवसर

ब्रह्मवेत्ता संत-महापुरुषों के पावन-प्रेरक मार्गदर्शन में समाज-सेवा के सुअवसर का लाभ विरले पुण्यात्मा ही ले पाते हैं । ऐसे विरले पुण्यात्मा जहाँ कहीं भी रहते हों, सेवा का मौका ढूँढ़ लेते हैं और सच्चाई, स्नेह एवं तत्परतापूर्वक जनसेवा करके अपना भाग्य बना लेते हैं तथा इस प्रकार अपने कुल को भी पवित्र करते हैं ।

कुछ ऐसे पुण्यात्मा हैं जो स्वयं तो 'ऋषि प्रसाद' पढ़ते ही हैं, इसके अतिरिक्त अपने सगे-संबंधियों, स्कूलों, पुस्तकालयों, सामूहिक स्थानों को भी भिजवाने की पवित्र पुण्यमय सेवा खोज लेते हैं । एक ऐसे ही पुण्यात्मा कैलाशजी सर्राफ हैं जिन्होंने 'ऋषि प्रसाद' के २३० आजीवन सदस्य और २१७ वार्षिक सदस्य अपनी ओर से बनाए हैं ।

आप भी चाहें तो अपने क्षेत्र के शिक्षण संस्थाओं, पुस्तकालयों, पंचायतों को तथा सरकारी एवं गैर-सरकारी दफ्तरों/प्रतिष्ठानों को इस 'ऋषि प्रसाद' मासिक का वार्षिक/पंचवर्षीय /आजीवन सदस्य बनाकर भगवान और संस्कृति के दैवी कार्य में सहभागी होकर आत्मिक विद्या का पुण्यलाभ ले सकते हैं ।

विरनिया (गुज.) : यहाँ पर नवनिर्मित शिवमन्दिर 'विश्वनाथ महादेव' की प्राण-प्रतिष्ठा दिनांक : २७ जनवरी को पूज्यश्री के करकमलों द्वारा भक्तिमय वातावरण में संपन्न हुई ।

सुलियात (गुज.) : २७ जनवरी को ही सुलियात में एक दिवसीय ज्ञान-भक्ति वर्षा कार्यक्रम पूज्यश्री के पावन सान्निध्य में सम्पन्न हुआ । पंचमहाल जिले के ग्रामीण भक्तजन लोकलाडले राष्ट्रसंत पूज्य बापू को इस छोटे से ग्राम में लाने में सफल हुए । निश्चय ही संतों के प्रति यह उनकी दृढ़ श्रद्धा और निःस्वार्थ प्रेम का ही फल था कि जहाँ बड़े-बड़े महानगरों की समितियाँ वर्षों से पूज्य बापू के आगमन के लिए चक्कर काट रही हैं, वहीं भक्ति व सेवाभाव से ओतप्रोत यह गाँव तीर्थत्व का पुण्य प्राप्त करने में सफल हुआ ।

गोधरा (गुज.) : २८ से ३० जनवरी तक यहाँ ज्ञान-भक्ति और योगमार्ग के अनुभवनिष्ठ पूज्यपाद बापू के पावन सान्निध्य में ध्यान योग साधना शिविर का आयोजन हुआ । ३१ जनवरी को देश के कोने-कोने से आये हुए पूनमव्रतधारी साधकों के लिए पूनम-दर्शनोत्सव का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ । केनेडा के साधकों को भी पूज्यश्री ने टेलीफोन द्वारा सत्संग और साधना में उन्नति करने के लिए मार्गदर्शन प्रदान किया, जिसे गोधरा आश्रम के नवनिर्मित सत्संग-भवन में बैठे हजारों पूनम दर्शनार्थी भक्तों ने भी श्रवण किया । उस समय पूज्य बापू के मुख से सुनी हुई वह वाणी सहज ही स्मरण हो आई कि : 'भगवान श्रीकृष्ण यदि इस

समय आयें तो घोड़ागाड़ी का उपयोग नहीं करेंगे बल्कि मर्सीडीज या आधुनिक साधनों का ही उपयोग करेंगे।'

हिम्मतनगर : ४ फरवरी को हिम्मतनगर आश्रम के एकान्त और प्राकृतिक वातावरण के मध्य स्थानीय ग्रामवासी साधकों के लिए विशेष सत्संग-प्रवचन का आयोजन हुआ। उन्हीं की भाषा-शैली में हास्य-विनोद के कई प्रसंग बताते हुए पूज्यपाद बापू ने निज विवेक के आदर पर जोर दिया और कहा : "**जिस क्षण आप निज विवेक का आदर करेंगे उसी क्षण आपके जीवन का सम्पूर्ण दुःख दूर हो जायेगा और आपको अलौकिक आनंद की अनुभूति होगी।**"

बायल ढांकरोल (गुज.) : पूज्यश्री की अमृतवाणी से लाभान्वित होनेवाले नगरों-महानगरों और गाँवों की सूची में इस छोटे-से गाँव का नाम कभी नहीं भुलाया जा सकेगा। दिनांक : ७ फरवरी को कई किलोमीटर दूर-सुदूर गाँवों के श्रद्धालु ग्राम्यजन अपने लोकलाडले बापू के दर्शन करने पैदल ही चले आये और अन्त में सत्संग स्थल से अपने गाँवों तक पैदल ही जाते हुए देखे गये। भारत-दर्शन को आये हुए एक विदेशी ने भारत-परिभ्रमण के बाद अपने संस्मरण में लिखा है : "मुंबई आदि महानगरों को देखकर आप भारत की कल्पना नहीं कर सकते। यदि भारत की वास्तविक झाँकी देखना चाहते हों तो गाँवों में देखो।"

कबीरदासजी ने ठीक ही कहा है :

संत मिलन को जाइये, तजी मोह माया अभिमान।
ज्यों ज्यों पग आगे धरे, कोटि यज्ञ समान॥

बायल ढांकरोल के आनंदधाम में आयोजित एक दिवसीय गीता भागवत सत्संग समारोह में भक्तजन पूज्यश्री की सत्प्रेरणा व प्रभुप्रीति की प्यालियाँ पीकर आनंद से झूम उठे।

निर्दोष हृदय भोले-भाले, भक्ति में बन गये मतवाले॥

उज्जैन (म. प्र.) : महाकाल की नगरी उज्जैन में महाशिवरात्रि के पर्व पर दिनांक : १३ से १५ फरवरी तक ध्यानयोग वेदांत शक्तिपात साधना शिविर का आयोजन हुआ। मंगलनाथ रोड पर स्थित सांदीपनि ऋषि की तपस्थली में निर्मित संत श्री आसारामजी आश्रम तीन दिनों तक आध्यात्मिक प्रेरणा का केन्द्रबिन्दु बना रहा। मध्य प्रदेश के अलावा दिल्ली, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, हरियाणा, बिहार, पंजाब, गुजरात तथा दक्षिण अफ्रीका के भक्तवृन्द आत्मा-परमात्मा को छूकर आनेवाली पूज्यश्री की आत्मीयतापूर्ण अमृतवाणी का रसपान कर कृतकृत्य हो उठे। एक लाख लोगों के बैठने की क्षमतावाला विशाल सत्संग-मण्डप भी भक्तसमुदाय की उमड़ी भीड़ के कारण छोटा पड़ने लगा। सड़कों पर खड़े होकर लोग इस महाकुंभ-से दृश्य का आनंद ले रहे थे। आत्मा-परमात्मा की अनुभूति करानेवाले यौगिक प्रयोगों व शक्तिपात वर्षा से भक्तजनों में अष्टसात्त्विक भाव यहाँ स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे। नगर के अखबार यहाँ से बहनेवाली भक्तिधारा को दूर-दूर तक लोगों के बीच प्रवाहित करने की अपनी भूमिका में पीछे नहीं रहे। उसके कुछ नमूने यहाँ प्रस्तुत हैं। 'अवन्तिका' अखबार ने अपने १६ फरवरी '९९ के अंक में लिखा है :

व्यवहार संसार का और मनन परमात्मा का करो

उज्जैन : गीता का ज्ञान पापनाशक, ज्ञानवर्द्धक एवं मानव जीवन के लिए मार्गदर्शक है। ब्रह्मज्ञानी संत-पुरुषों के मुख से गीताज्ञान का श्रवण-मनन मनुष्य को महान् बना देता है। नश्वर संसार और उसकी वस्तुओं के प्रति जो सावधान और शाश्वत परमात्मा के विषय में जो उपराम है वह भोगी है। शाश्वत आत्मा-परमात्मा में सजग और नश्वर संसार के प्रति जो उपराम है वह योगी है।

उक्त उद्‌गार योगविद्या के अनुभवनिष्ठ आचार्य पूज्यपाद संत श्री आसारामजी महाराज ने मंगलनाथ रोड़ स्थित आश्रम के विशाल प्रांगण में लाखों भक्तों के बीच व्यक्त किये। चित्त की

प्रसन्नता और स्वर्गीय सुख की प्राप्ति के लिए दुर्लभ उपासना-पद्धति बताते हुए योगीराज ने कहा :

''गणेशजी की उपासना विघ्न-विनाशक है । सूर्य की उपासना आरोग्यप्रदायक है और आत्मज्ञान की उपासना चौरासी लाख जन्मों के संस्कार को नष्ट कर परमात्मपद में प्रतिष्ठित करा देती है ।''

जीवन में सद्‌गुरु की आवश्यकता पर बल देते हुए संतप्रवर ने कहा : **''जैसे विधवा स्त्री का शृंगार व्यर्थ है वैसे ही निगुरे व्यक्ति का जीवन व्यर्थ बीत जाता है । सत्संगप्रेमी सद्‌गुरु के शिष्य संसार की विभिन्न परिस्थितियों, सुख-दुःख के प्रसंग में चलायमान नहीं होते । उन्हें जीवन जीने की वास्तविक कला प्राप्त हो जाती है ।''**

अनुभवनिष्ठ आचार्यप्रवर ने अपनी अनुभव-सम्पन्न वाणी में विशाल जनमेदनी व साधकवृंद के समक्ष निष्कामता व निर्लोभता के अनेक प्रसंग व्यक्त किये ।

अपने हक की कमाई खाने की प्रेरणा देते हुए पूज्यपाद बापू ने सत्संग-प्रेमियों को कहा :

''व्यवहार संसार का करें, पर मनन परमात्मा का करें । नाहक का अन्न खाने से मन भी नाहक के विचारवाला हो जाता है । इसीलिए कहा गया है : जैसा खाओगे अन्न वैसा होगा मन । जैसा पानी वैसी वाणी ।''

जीवन में आनेवाले विघ्न-बाधाओं और दुःखद प्रसंगों पर भी सम व प्रसन्न रहने की कला सिखाते हुए संत श्री बापूजी ने कहा :

''सदैव सम और प्रसन्न रहना ईश्वर की सर्वोपरि भक्ति है । निर्मल मन में सहज ही प्रसन्नता व आनन्द फलित होता है । निर्मल मनवाले पुरुष के संपर्क में आनेवाला पुरुष भी पुण्यात्मा होने लगता है ।''

सत्संग की महत्ता बताते हुए संतश्रेष्ठ पूज्यश्री ने कहा :

''ब्रह्मवेत्ता पुरुष के सत्संग से भक्तों की भक्ति, उपासकों की उपासना, साधकों की साधना पुष्ट होती है । अभक्त भी भक्ति की राह पर चल पड़ता है ।''

सत्संग को मन वश करने का श्रेष्ठ साधन बताते हुए विशाल साधकवृंद के बीच बापूजी ने कहा :

''सत्संग-श्रवण करते-करते मन जैसे एकाग्र व वश में होता है, ऐसा सुलभ दूसरा साधन नहीं है । अविद्या के दोष से, अज्ञान से तमाम दोष आते हैं । आत्मज्ञान के सत्संग से अविद्या के दोष निवृत्त होते हैं ।''

त्रिदिवसीय 'महाशिवरात्रि शक्तिपात ध्यान योग शिविर' के अंतिम दिन के अंतिम सत्र में विश्वविख्यात संत श्री आसारामजी बापू के आत्मीयता से ओतप्रोत सत्संग-प्रवचन में जनसैलाब उमड़ पड़ा । 'हरि ॐ' कीर्तन के धुन में लोग झूम उठे । तालियों की तालबद्ध ध्वनि व मधुर संगीत से विशाल सभा-मंडप हरिमय हो गया । तुलसीदासजी ने उस समय कहा था : **कलियुग केवल नाम अधारा ।** कलियुग में नामसंकीर्तन की बड़ी महिमा है, यह प्रत्यक्ष देखा गया । लोग हरिकीर्तन के प्रभाव से खड़े होकर नाचे । पुराणों में वर्णित अष्ट-सात्त्विक भाव भक्तों में स्पष्ट दृष्टिगोचर हुए । अंतिम दिन के अंतिम सत्र के दिव्य भावमय वातावरण को इस तरह व्यक्त किया जा सकता है कि गूँगे ने गुड़ खाया । जो वहाँ उपस्थित थे वे ही उसकी वास्तविक अनुभूति कर सकते हैं ।

स्विट्जरलैण्ड की विदुषी साध्वी उर्सुला वार्टमेन का वह वाक्य स्मरण हो रहा था : **''हमारे ईसाई देशों में संत श्री आसारामजी बापू जैसे एक भी संत-महापुरुष हो जाएँ तो वे समग्र विश्व में ईसाइयत का डंका बजा दें । यह सब देखकर मुझे भारतीयों के प्रति मधुर ईर्ष्या होती है ।''**

आज ईमानदारी व निःस्वार्थ भाव से कर्म करने की प्रेरणा देते हुए संतश्री ने कहा :

''जो बाह्य स्वार्थ के लिए कर्म करते हैं उनको नश्वर फल मिलता है । उनका जीवन बीत जाता

है, फिर भी उन्हें पता ही नहीं चलता कि मेरे साथ सर्वान्तर्यामी परमात्मा है । आपके अंतःकरण में अनन्त संस्कार भरे हुए हैं । जैसा संग मिलता है वैसा ही रंग निखरता है । इसलिए सत्पुरुषों का ही संग करें । ब्रह्मज्ञानी संतों के संग से हमें, हमारे पितरों को तथा ७-७ पीढ़ियों को जितना फायदा होता है वह हमें पता नहीं चलता ।''

पूरे देश में फैली हुई लगभग ११०० योग वेदान्त सेवा समितियों की खिंचाई करते हुए पूज्य बापू ने कहा :

''लोगों के बीच नाम या कीर्ति के लिए बने हुए अध्यक्ष पदाधिकारियों को बदलकर अबदल परमात्मा की ओर रुचि रखनेवाले साधकों को अध्यक्ष पद पर निर्वाचित किया जायेगा ।''

नासमझी दूर कर महापुरुषों की समझ को अपनी समझ बनाने का आह्वान करते हुए ब्रह्मनिष्ठ संतप्रवर ने कहा :

''हम समझ के सुधार में विश्वास रखते हैं । धनवान धन के संग्रह में न डूबें, बल्कि ज्ञान का आदर करें । धन वहीं शोभा देता है जहाँ ज्ञान का आदर होता है और ईश्वर के नाते कर्म करने से कर्म में, अपने व्यक्तित्व में निखार आता है ।''

परमात्मा के ऐश्वर्य को प्राप्त करने की साधना व कला बताते हुए पूज्य बापू ने कहा :

''जहाँ-जहाँ बल, कला या सौन्दर्य अथवा प्रभाव दिखाई देता है उसका उद्गम-स्थल परमात्मा ही है । बुद्धिमानों की बुद्धि और कलाकारों की कला उसी परमात्मा के अखूट खजाने से निकलती है जो कभी खूटता ही नहीं ।''

अपने भीतर स्थित अन्तरात्मा का सुख प्राप्त करने की युक्ति बताते हुए पूज्य बापू ने कहा :

''बाहर की वस्तु, परिस्थिति या व्यक्ति से सुख लेने का आग्रह रखोगे तो आप अवश्य दुःखी होगे । ईश्वर के सिवाय कहीं भी मन लगाया तो अंत में रोना ही पड़ेगा ।''

'चौथा संसार' अखबार ने अपने दिनांक : १५ फरवरी '९९ के अंक में लिखा है :

महाशिवरात्रि पर्व पर मनमुटाव मिटाकर मेलजोल बढ़ायें :

उज्जैन : १४ फरवरी । ''भगवान शिव ने जगत की भलाई के लिए विषपान किया था और 'नीलकंठ' कहलाये । आपके जीवन में कुछ खट्टा-खारा आ जाये तो नीलकंठ को याद करो । खिन्न करनेवाले विचारों को त्यागकर प्रसन्न करनेवाले विचार करो । अपने मन को 'झंझट प्रूफ' बनाओ ।''

तपोनिष्ठ संतश्री ने व्रत की महिमा का उल्लेख करते हुए कहा : ''शिवरात्रि व्रत योग और मोक्ष की प्रधानतावाला व्रत है ।''

जीवन में आध्यात्मिक साधना की महत्ता पर जोर देते हुए पूज्य बापू ने कहा :

''विपत्ति व विपरीत परिस्थितियों में मन में विक्षेप होने पर साधन-भजन एवं सत्संग बड़ी मदद करता है । समझ और ज्ञान से मनुष्य की जितनी रक्षा होती है, उतनी संसार की किसी वस्तु या व्यक्ति से नहीं होती । जब मन विषय-विकारों के सामने हारकर उनमें आबद्ध हो जाता है तो आप खोखले हो जाते हो । फलस्वरूप जीवन-संग्राम में भी असफलता का सामना करना पड़ता है । किन्तु दृढ़ मनोबल से संयम का सहारा लिया तो जीवन के हर क्षेत्र में आपकी चमक प्रगट होगी । दुर्बल मनवाले पराजित और दृढ़ मनोबलवाले विजयी होते हैं । मन को वश करने से मरणधर्मा जीव अमरता का अनुभव कर लेता है ।''

'दैनिक भास्कर' अखबार ने अपने १४ फरवरी '९९ के अंक में लिखा है :

मन को आज्ञानुसार चलानेवाले को स्वामी कहते हैं

उज्जैन । ''शिवरात्रि को किये गये जप, तप और व्रत हजारों गुना पुण्य देते हैं । सबकी मनोकामनाएँ पूर्ण करनेवाले भगवान शिव भभूत लगाकर औघड़ बने रहते हैं । तमाम विघ्न-बाधाओं के बीच भी शुद्ध मनवाले व्यक्ति में शिवस्वभाव

विद्यमान होता है जिससे वह कभी विचलित नहीं होता। जिसका मन विचलित होता है वह चौरासी के चक्कर में भ्रमण करता रहता है। संसार की भोग-इच्छाएँ हटाने से मन और चित्त वश में हो जाता है। एकाग्रता सामर्थ्य की जननी है। मन को एकाग्र कर परमार्थ में लगाना चाहिए। एकाग्रता से मानसिक सामर्थ्य निखरता है। मन को वश में करना मुक्तिमार्ग का 'पासपोर्ट' पाना है।

मन को एकाग्र करने के लिए अभ्यास की जरूरत है। इस संसार में जिन्होंने ऊँचाइयाँ प्राप्त की हैं उनका मन एकाग्र रहा है। वास्तव में बड़ा आदमी वही है जिसने मन पर विजय प्राप्त कर ली है। जो व्यक्ति जितना चंचल प्रवृत्ति का होता है वह उतना ही छोटा होता है। मन आदमी का निकटवर्ती मित्र है। मन के हारने से हार हो जाती है और मन को जीतने से जीत हो जाती है।''

संत श्री आसारामजी बापू ने व्यंग्यात्मक रूप में कहा : ''**लोग अपना बाथरूम साफ रखते हैं लेकिन मन गंदा रखते हैं। मन स्वच्छ है तो सब कुछ स्वच्छ है।**

दवा मजा लेने के लिए नहीं, रोग मिटाने के लिए खाई जाती है। उसी तरह भोजन मजा लेने के लिए नहीं, पेट भरने के लिए करना चाहिए। जिनका मन शुद्ध है उनको थोड़ी अशुद्धि भी खटकती है। मन को अपनी आज्ञानुसार चलानेवाले को स्वामी कहा जाता है। जो नियम और व्रत से मन को जीत ले, वास्तविक रूप में वही स्वामी है।''

'अंचल चेतना' अखबार ने अपने १४ फरवरी '९९ के अंक में लिखा है :

महापुरुषों ने जेल को पूजास्थली बना दिया था

- संत श्री आसारामजी बापू

उज्जैन। पूज्य संत श्री आसारामजी महाराज ने उज्जैन जिला केन्द्रीय जेल में आयोजित सत्संग सभा में कहा : ''**जेलें तीन प्रकार की होती हैं। पहली जेल नरक है, दूसरी जेल माँ का गर्भ है और तीसरी जेल, जहाँ सामाजिक नियमों का उल्लंघन करने पर कानून के अनुसार न्यायालय द्वारा भेजा जाता है। इसे पूजास्थली बनाना या नरक बनाना आपके हाथों में है।**''

संतश्री ने कहा : ''**राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी, नेहरूजी, श्री अरविन्द घोष जैसे महापुरुषों ने जेल को पूजास्थली बना दिया था। जेल में लिखी डायरियाँ उनकी पुस्तकें बन गयीं।**

यहाँ रहकर मन के विकारों को नष्ट कर एक नये जीवन की शुरुआत करो। आप जब भी बाहर निकलो तो जेल आपके लिए तपस्यास्थली कहलाये। ऐसे नेक इन्सान बनकर निकलो।''

पूज्य बापू के अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
२५ से २७ फरवरी '९९ २८ फरवरी से २ मार्च '९९	सूरत आश्रम में	विद्यार्थी शिविर होली ध्यान योग शिविर	-	संत श्री आसारामजी आश्रम, वरियाव रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत-५.	६८५३४१, ६८७९३६.
१२ से १४ मार्च '९९	हडियोल (गुजरात)	सत्संग समारोह	सुबह ९-३० से ११-३० शाम ३-३० से ५-३०	हडियोल, हिंमतनगर से ६ कि.मी. दूर, शामलाजी हाईवे पर।	(०२७७२) ४३९४०, ८५२६६.
१९ से २१ मार्च '९९	अमदावाद आश्रम में	चेटीचंड ध्यान योग शिविर	-	संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-५	७५०५०१०, ७५०५०११.

पूर्णिमा दर्शन : ३१ मार्च '९९. अमदावाद आश्रम में।

महाशिवरात्रि ध्यान योग शिविर, संत श्री आसारामजी आश्रम, उज्जैन।

संत का दर्शन कर के, कैदी भये निहाल। धन्य धन्य वे हो गये, जो देखा दीनदयाल॥

केन्द्रीय जेल में प्राणिमात्र के परम हितैषी पू. बापू ने जब बरसायी अपनी अहैतुकी कृपा... सब कैदी निहाल हो गये।

ध्यान योग शिविर के शुभारंभ में
पूज्यश्री की आरती उतारता हुआ भक्तवृंद।

ध्यान योग शिविर में सत्संगामृत का पान करते हुए हजारों श्रद्धालुजन।